कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास को समर्पित

वर्ष 65 अंक : 7 पृष्ठ : 56 मई 2019 मूल्य : ₹ 22

जैविक खेती

गांधीजी पर
हमारा समृद्ध साहित्य

प्रकाशन विभाग

सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार

सूचना भवन, सी जी ओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली -110003

ऑर्डर के लिए संपर्क करें :

फोन : 011-24367260, 24365610, ई-मेल : businesswng@gmail.com

हमारी पुस्तकें ऑनलाइन खरीदने के लिए कृपया **www.bharatkosh.gov.in** पर जाएं।

चुनिंदा ई-बुक एमेज़ॉन और गूगल प्ले पर उपलब्ध।

वेबसाइट : **www.publicationsdivision.nic.in**

फॉलो करें
@ DPD_India

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष : 65★ मासिक अंक : 7★ पृष्ठ : 56 ★ वैशाख–ज्येष्ठ 1941★ मई 2019

प्रधान संपादक
शमीमा सिद्दीकी
वरिष्ठ संपादक
ललिता खुराना

संपादकीय पत्र–व्यवहार
संपादक
कमरा नं. 655, प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय
सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स,
लोधी रोड, नई दिल्ली–110 0 03
दूरभाष : 011–24365925
वेबसाइट : publicationsdivision.nic.in
ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
विनोद कुमार मीना

व्यापार प्रबंधक
दूरभाष : 011–24367453
ई–मेल : pdjucir@gmail.com

आवरण
शिशिर कुमार दत्ता

सज्जा
मनोज कुमार

मूल्य एक प्रति	:	22 रुपये
विशेषांक	:	30 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	230 रुपये
द्विवार्षिक	:	430 रुपये
त्रिवार्षिक	:	610 रुपये

इस अंक में

सतत कृषि विकास में जैविक खेती की भूमिका — डॉ. दिनेश कुमार एवं डॉ. यशबीर सिंह शिवे — 5

भारत में जैविक प्रमाणीकरण एवं विपणन — डॉ. शालिनी फर्त्याल एवं डॉ. कृष्ण चंद्र — 12

जैविक खेती से फल उत्पादन की संभावनाएं — डॉ. राधा मोहन शर्मा, डॉ. अनिल कुमार दुबे एवं नरेन्द्र सिंह — 16

सब्जियों की जैविक खेती — डॉ. प्रवीण कुमार सिंह — 22

जैविक खेती के लिए पोषक तत्व प्रबंधन — डॉ. विनोद कुमार शर्मा, डॉ. सर्वेन्द्र कुमार, कपिल आत्माराम चौबे — 28

जैविक खेती की उन्नत तकनीकें — डॉ. वीरेन्द्र कुमार — 33

जैविक खेती के स्वास्थ्य और पर्यावरणीय लाभ — निमिष कपूर — 39

जैविक खेती द्वारा खाद्यान्न फसलों का रोग प्रबंधन — डॉ. दीबा कामिल एवं अंजली कुमारी — 43

उत्तर-पूर्व में जैविक खेती का अवलोकन — रविकांत अवस्थी, राघवेंद्र सिंह, एस. एम. कण्डवाल — 47

जैविक खेती में महिलाओं की भागीदारी — डॉ. अंशु राहल, यांशी एवं रेनु कुमारी — 52

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में व्यापार प्रबंधक, (वितरण एवं विज्ञापन) प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, कमरा नं. 48–53, सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली – 110003 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए विज्ञापन प्रभाग, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय, कमरा नं. 48–53, सूचना भवन, सी.जी.ओ. काम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली – 110003 से संपर्क करें। दूरभाष : 011–24367453

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो। पाठकों से आग्रह है कि कैरियर मार्गदर्शक किताबों/संस्थानों के बारे में विज्ञापनों में किए गए दावों की जांच कर लें। पत्रिका में प्रकाशित विज्ञापनों की विषय–वस्तु के लिए 'कुरुक्षेत्र' उत्तरदायी नहीं है।

संपादकीय

भारत में जैविक कृषि पद्धति नई नहीं हैं; प्राचीनकाल से ही हमारे यहां इसका प्रचलन रहा है। वर्तमान में जैविक खेती के पुनरुत्थान को समझने के लिए हमें पीछे लौट कर हरितक्रांति युग पर नज़र डालनी होगी। हरितक्रांति और उसके बाद अनाज उत्पादकता में नाटकीय ढंग से अभूतपूर्व वृद्धि हुई जिसके दूरगामी प्रभाव पड़े। हरितक्रांति के दौरान मिली सफलताओं के समय उर्वरकों और कीटनाशकों का अत्यधिक प्रयोग हुआ, जिससे धीरे–धीरे मृदा की उत्पादकता में कमी आती गई। इसलिए, कृषि विज्ञान की दुनिया एक समग्र उत्पादन प्रबंधन प्रणाली के रूप में जैविक खेती को चुनने के लिए मजबूर हुई चूंकि यह खेती पर्यावरण और सतत कृषि के अनुकूल है।

जैविक खेती आमतौर से "वापिस प्रकृति की ओर" अभियान के साथ जुड़ी हुई है। सरल शब्दों में, जैविक खेती रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों से दूर रहती है और इसके अंतर्गत मिट्टी में कचरा खाद एवं सीवेज, खाद, पौधे के अवशेष, खाद्य प्रसंस्करण अपशिष्ट आदि मिलाकर मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने का प्रयास किया जाता है। वर्तमान में जैविक खेती इतनी विकसित हो गई है कि यह पिछले युग में लौटने मात्र तक सीमित नहीं है बल्कि उत्पादन की एक वैकल्पिक आधुनिक पद्धति है जो उच्च गुणवत्तायुक्त उत्पादन प्राप्त करने के लिए पूरी तरह से जैविक प्रक्रियाओं पर निर्भर है।

जैविक खेती में विभिन्न तकनीकें शामिल हैं जो पर्यावरण के अनुकूल हैं और मिट्टी की उर्वरता को बढ़ाती हैं। वे मुख्य रूप से हैं: फसल चक्रण (रोटेशन) – कीटों से बचने और मिट्टी की उर्वरता बनाए रखने के लिए मौसम के अनुसार एक ही क्षेत्र में विविध फसलों को उगाने की तकनीक; हरी खाद का उपयोग करना – पौधों की पत्तियों और पौधों की अपशिष्ट सामग्री; जैविक कीट नियंत्रण– पौधों को कीटों से बचाने के लिए कृत्रिम रसायनों के बजाय जीवित जीवों का उपयोग और वर्मी कम्पोस्टिंग– रसोई कचरे और अन्य वनस्पति कचरे के मिश्रण के साथ खाद तैयार करने के लिए विभिन्न कृमियों का उपयोग करके खाद बनाने की प्रक्रिया।

भारत में जैविक खेती को बड़े पैमाने पर बढ़ावा देने की ज़रूरत है। इसके लिए कुछ रणनीतियां अपनानी होंगी जैसे विशेषज्ञों की मदद से किसान निर्माता कंपनियों को उनके उत्पादों जैसे जंगली कॉफी, आदिवासी शहद, आदि हेतु ब्रांडिंग समर्थन ताकि उनके उत्पादों का मूल्य–संवर्धन हो सके। साथ ही, उन्हें जैविक प्रमाणपत्र मिल सके जोकि किसान को अपने उत्पाद को 'जैविक' के रूप में प्रस्तुत करने, बेचने, लेबल लगाने की अनुमति देता है जिससे उपयोगकर्ताओं में उत्पाद के प्रति विश्वास पैदा होता है।

जैविक उत्पादों की खुदरा बिक्री, पैकेटबंद करना और लेबल लगाना भी जैविक उत्पादों के प्रचार में महत्वपूर्ण घटक हैं। जैविक उत्पादों के बाजार को एक प्रीमियम बाजार माना जाता है, जो मानकों के उच्च–स्तर को बनाए रखता है। इन मानकों का पालन उत्पाद की संपूर्ण मूल्य श्रृंखला में– उत्पाद नियोजन से लेकर उत्पादन और उत्पादन के बाद तक किया जाना है। उपज के विपणन हेतु प्रणाली के दृष्टिकोण में व्यापक बदलाव लाने की आवश्यकता है।

भारत में एक प्रमुख जैविक कृषि देश बनने की क्षमता है। हमारे कृषि उत्पादों की अंतर्राष्ट्रीय–स्तर पर मांग, विभिन्न फसलों की खेती के लिए विविध कृषि–जलवायु क्षेत्र, घरेलू बाजार का आकार और पर्यावरण के अनुकूल खेती की लंबी परंपरा हमारे देश में जैविक खेती के अनुकूल माहौल बनाती है। वर्तमान स्थिति को ध्यान में रखते हुए भारत में सतत कृषि विकास के लिए जैविक प्रथाओं को आगे बढ़ाने की व्यापक गुंजाइश है।

सतत कृषि विकास में जैविक खेती की भूमिका

–डॉ. दिनेश कुमार एवं डॉ. यशबीर सिंह शिवे

भारत धीरे–धीरे लेकिन लगातार जैविक खेती की ओर बढ़ रहा है। सतत ग्रामीण विकास में इसके योगदान की अपार संभावनाएं हैं। ग्रामीण युवाओं के रोजगार के लिए एक महान अवसर जैविक उत्पादों और आदानों के उत्पादन, प्रसंस्करण और विपणन में मौजूद है। हालांकि, जैविक खेती में किसानों और अन्य हितधारकों को कई प्रकार की बाधाओं का सामना करना पड़ता है और इनको दूर करना भी महत्वपूर्ण है।

देश के समुचित उत्थान के लिए सतत ग्रामीण विकास आवश्यक है। एक तरफ तो ग्रामीण खुशहाली एवं विकास जरूरी है तो दूसरी तरफ इस सतत विकास को बनाए रखने के लिए सीमित प्राकृतिक संसाधनों का सदुपयोग एवं संरक्षण भी आवश्यक है। यदि ये प्राकृतिक संसाधन समाप्त हो गए अथवा उनका अधिक दोहन हुआ तो विश्व खाद्य सुरक्षा खतरे में पड़ सकती है।

प्रमुख प्राकृतिक संसाधन हैं– भूमि, जल, वायु, वन और वन्यजीव, आदि। विभिन्न मानव सभ्यताओं के विकास में उपरोक्त प्राकृतिक संसाधनों का विशेष योगदान रहा है। इन संसाधनों के समुचित उपयोग से मानव सभ्यताएं विकसित होती रही हैं और इनके दुरुपयोग से नष्ट भी हुई हैं। वर्तमान में विश्व के कुछ देशों जैसे चीन और भारत, आदि में मानव और पशु जनसंख्या बहुत तेज़ी से बढ़ी है जिसके कारण मानव आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन किया गया है। प्राकृतिक संसाधनों के कृषि एवं अन्य क्षेत्रों में अत्यधिक दोहन से अनेक समस्याओं का जन्म हुआ है। कुछ क्षेत्रों अथवा दशाओं में कृषि उत्पादन के अंतर्गत रासायनिक कीटनाशियों का अविवेकपूर्ण एवं अंधाधुंध प्रयोग किया गया है जिसके अनेक दुष्परिणाम सामने आए हैं। जल, वायु, मृदा और यहां तक कि विभिन्न खाद्य पदार्थ भी दूषित हो चुके हैं। मृदा, जल और वायु की गुणवत्ता में काफी गिरावट आ चुकी है जिससे वर्तमान कृषि उत्पादन की सतत्ता बनाए रखना अत्यधिक कठिन प्रतीत होता है।

फसल उत्पादन में प्रयुक्त कारकों (उपदानों) की उत्पादकता में गिरावट एक गंभीर चुनौती बनकर सामने आ रही है। जो उपज बीस वर्ष पहले उर्वरक का एक कट्टा डालकर मिलती थी अब वही उपज उर्वरक के दो कट्टे डालकर मिलती है। इसी प्रकार पीड़कों (पेस्ट्स) के नियंत्रण के लिए अब रसायनों का पहले की तुलना में अधिक छिड़काव करना पड़ता है। इससे फसल उत्पादन की लागत बढ़ जाती है जिसके परिणामस्वरूप प्रक्षेत्र आय में कमी आ जाती है। साथ ही, अनेक प्रकार के जलवायु परिवर्तनों के कुप्रभावों के कारण भी कृषि उत्पादन प्रभावित हो रहा है और खेती से प्राप्त आमदनी घट रही है। कृषि में परंपरागत विधियों को अपनाने के कारण जैव–विविधता में लगातार कमी आ रही है। फसलों के विविधीकरण में कमी आई है जिसके कारण मृदा की आंतरिक जैव–विविधता में

भी कमी आई है। साथ ही, मृदा में कृत्रिम रसायनों के प्रयोग के कारण भी इसमें उपस्थित जैव विविधता में कमी आई है। मृदा के उपयुक्त स्वास्थ्य एवं आवश्यक पोषक तत्वों के चक्रीकरण के लिए जैव विविधता को बनाए रखना बेहद जरूरी होता है।

रासायनिक (परंपरागत) खेती से उत्पादित बहुत से खाद्य–पदार्थों में कीटनाशियों एवं अन्य जहरीले रसायनों के अवशेष मिल रहे हैं। कई बार तो इन अवशेषों का स्तर खाद्य पदार्थों में अनुमत्त सीमा से भी कई गुना अधिक होता है। इस तरह के खाद्य पदार्थों का लगातार उपभोग करने से जानवरों एवं मनुष्यों में कई प्रकार के असाध्य रोग आ जाते हैं।

क्या है जैविक खेती

जैविक खेती कृषि की वह विधि है जिसमें संश्लेषित उर्वरकों, संश्लेषित कीटनाशियों (कीटनाशी, कवकनाशी, जीवाणुनाशी, शाकनाशी) और कृत्रिम वृद्धि नियामकों का प्रयोग सर्वथा वर्जित रहता है। साथ ही, ट्रांसजैनिक (पराजीनी) फसलों अथवा उनकी क़िस्मों का प्रयोग भी वर्जित होता है। बाह्य निवेशों का न्यूनतम प्रयोग एवं फार्म पर उत्पादित निवेशों का अधिकतम प्रयोग किया जाता है। तथा भूमि की उर्वराशक्ति को बनाए रखने अथवा उसकी वृद्धि पर बल दिया जाता है। इसके लिए फसल चक्र, हरी खाद, कम्पोस्ट आदि के प्रयोग पर बल दिया जाता है। जैविक खेती से फसल, मानव, मृदा और पर्यावरण स्वास्थ्य में वृद्धि एवं टिकाऊपन आता है।

विश्व और भारत में जैविक खेती

वर्तमान में जैविक खेती विश्व के लगभग 181 देशों में 698 लाख हेक्टेयर भूमि पर 29 लाख कृषकों द्वारा की जा रही है (वर्ष 2017)। भारत में भी जैविक खेती का विस्तार हो रहा है। वर्ष 2017–18 में भारत में जैविक खेती के अंतर्गत कुल 35.6 लाख हेक्टेयर प्रमाणित क्षेत्र था जिसमें से 17.8 लाख हेक्टेयर वन्य अथवा जंगली क्षेत्र और उतना ही (17.8 लाख हेक्टेयर) कर्षित क्षेत्र था। वर्ष 2017–18 में 17 लाख टन जैविक उत्पादों का उत्पादन किया गया। मध्य प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान, उत्तराखंड, केरल, कर्नाटक, असम, सिक्किम और अन्य उत्तर–पूर्वी राज्य जैविक खेती को अपनाने वाले प्रमुख राज्य हैं। इसमें सोयाबीन, कपास, गन्ना, तिलहन, दलहन, बासमती धान, मसाले, चाय, फल, सूखे फल, सब्जियां, कॉफ़ी और उनसे प्राप्त मूल्य–संवर्धित उत्पाद शामिल हैं। देश से जैविक पदार्थों के निर्यात में भी धीरे–धीरे वृद्धि हो रही है।

भारत ने वर्ष 2017–18 में 4.58 लाख टन जैविक उत्पादों का विभिन्न देशों को निर्यात किया। इन जैविक उत्पादों में मुख्य रूप से तिलहन (47.6 प्रतिशत), धान (अन्न) एवं मोटे अनाज (10.4 प्रतिशत), रोपण फसलें जैसे चाय एवं कॉफ़ी (8.96 प्रतिशत), शुष्क फल (8.88 प्रतिशत), मसाले (7.76 प्रतिशत), एवं अन्य। यह निर्यात अमेरिका, यूरोपियन संघ, कनाडा, स्विट्ज़रलैंड, कोरिया, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, दक्षिणी अफ्रीका, इजराइल एवं वियतनाम आदि देशों को किया गया। वर्ष 2017–18 में निर्यात किए गए जैविक उत्पादों का कुल मान 3453.48 करोड़ रुपये था। भविष्य में जैविक पदार्थों के अंतर्गत क्षेत्रफल बढ़ने की अपार संभावनाएं हैं जिससे कि इन पदार्थों का उत्पादन एवं निर्यात बढ़ेगा और देश अधिक मात्रा में विदेशी मुद्रा का अर्जन कर पाएगा। इससे निश्चित तौर पर ग्रामीण विकास में भी मदद मिलेगी। जैविक खेती से संबंधित विभिन्न आंकड़ों का उल्लेख सारणी–1 में किया गया है।

जैविक खेती एवं सतत कृषि विकास

इसमें कोई संदेह नहीं है कि भारत में ग्रामीण विकास के लिए कृषि का विकास आवश्यक है क्योंकि भारत एक कृषि प्रधान देश है। यह तय है कि भारत में कृषि विकास के बिना ग्रामीण विकास संभव नहीं है। इसके पीछे एक प्रमुख कारण यह भी है कि देश की लगभग दो–तिहाई से अधिक आबादी आज भी गांवों में निवास करती है और अधिकतर लोगों की जीविका का आधार प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि ही है। इस दशा में जैविक खेती को अपनाकर बहुत–सी समयस्याओं का सामना सफलतापूर्वक किया जा सकता है। कुछ लोग जैविक खेती की अक्सर कम पैदावार के लिए आलोचना भी करते हैं। उनके मतानुसार बढ़ती आबादी को यह खेती पर्याप्त मात्रा में खाद्य–पदार्थों की आपूर्ति करने में सक्षम नहीं होगी। हालांकि, सवाल यह नहीं है कि हम कल को पूरी दुनिया

सारणी–1 भारत में जैविक खेती से संबंधित कुछ आंकड़े

वर्ष	2010-11	2011-12	2012-13	2013-14	2014-15	2015-16	2016-17	2017-18
कुल उत्पादन (लाख टन)	38.8	6.9	13.4	12.4	11.0	13.5	11.8	17.0
निर्यात की कुल मात्रा (1000 टन)	69.8	147.8	165.2	194.1	285.6	263.7	309.8	458.0
कुल निर्यात का मूल्य (लाख अमेरिकन डालर)	157	358	374	403	327	298	370	515
प्रमाणीकरण के अंतर्गत कुल कर्षित क्षेत्र (लाख हेक्टेयर)	2.4	10.8	5.0	7.2	12.0	14.9	14.5	17.8
प्रमाणीकरण के अंतर्गत कुल वन्य क्षेत्र (लाख हेक्टेयर)	41.9	44.7	47.1	39.9	37.0	42.2	30.0	17.8
प्रमाणीकरण के अंतर्गत कुल (वन्य एवं कर्षित) क्षेत्र (लाख हेक्टेयर)	44.3	55.5	52.1	47.2	49.0	57.1	44.5	35.6

भारत में जैविक खेती के प्रसार की संभावनाएं

देश में वर्तमान समय में सीमित भूमि पर जैविक खेती की जा रही है। यह तो संभव ही नहीं है कि देश की समस्त खेती योग्य भूमि को जैविक खेती में परिवर्तित कर दिया जाए क्योंकि खाद्य सुरक्षा की निरंतरता को बनाए रखने के लिए परंपरागत खेती भी आवश्यक है। विभिन्न राज्यों की चुनिंदा भूमियों और क्षेत्रों में जैविक खेती को अपनाया जा सकता है। खासकर उन क्षेत्रों में जहां रासायनिक उर्वरकों और कृत्रिम कीटनाशियों का खेती में पहले से ही न्यूनतम प्रयोग हो रहा है। दूसरी तरफ, सिंचित क्षेत्रों में भी, जहां रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का इस्तेमाल अपेक्षाकृत अधिक होता है और भूमि की उपजाऊ क्षमता में भी कमी आ चुकी है, जैविक खेती को अपनाकर मृदा एवं पर्यावरण स्वास्थ्य में वृद्धि की जा सकती है। फसल उत्पादन (कृषि) के अतिरिक्त पशुपालन, मुर्गीपालन, मधुमक्खी पालन, मछली–पालन एवं डेयरी, आदि को भी जैविक विधियों से किया जा सकता है। इसमें कृषकों की आय वृद्धि की भरपूर संभावनाएं हैं।

जैविक उत्पादन में प्रमाणीकरण एक महत्वपूर्ण प्रक्रिया है जिसमें किसानों को काफी पैसा खर्च करना पड़ता है। अतः प्रमाणीकरण में आने वाले खर्च को कम करने की नितांत आवश्यकता है जिससे कि लघु एवं सीमांत किसान भी जैविक उत्पादन कर सकें। इससे जैविक खेती को प्रोत्साहन मिलेगा। साथ ही, आरंभ के कुछ वर्षों में, खासकर परिवर्तन अथवा रूपांतरण काल में, जैविक खेती से कम उपज प्राप्त होती है। अतः इस प्रारंभिक अवधि के दौरान किसानों को उचित मुआवजा भी मिले।

को जैविक खेती में बदल दें, लेकिन हमारी मौजूदा खाद्य–प्रणाली से जुड़ी बड़ी चुनौतियों का सामना कैसे करेंगे! जलवायु परिवर्तन, जैव विविधता हानि, पानी की कमी, गरीबी और कुपोषण आदि कुछ ऐसी चुनौतियां हैं जो दिनोंदिन बढ़ती ही जा रही हैं। इन समस्याओं के समाधान में जैविक खेती महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। अतः जैविक खेती से संबंधित प्रमुख पहलुओं एवं मिथकों पर विस्तार से चर्चा करना आवश्यक हो जाता है।

फसल उत्पादकता

विश्व और भारत में किए गए अनेक कृषि अनुसंधान परिणामों से ज्ञात हुआ है कि परंपरागत खेती की तुलना में जैविक खेती से उत्पादन में लगभग 10–35 प्रतिशत तक गिरावट आती है, विशेषकर आरंभ के 2 से 3 रूपांतरण वर्षों में। वर्षा–आधारित (बारानी) क्षेत्रों में सिंचित क्षेत्रों की तुलना में जैविक उत्पादन में बहुत ही कम कमी आती है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि बारानी क्षेत्रों में पहले से ही आधुनिक निवेशों, (कृत्रिम उर्वरक एवं रसायन) का प्रयोग न के बराबर होता रहा है और साथ ही, जैविक खेती अपनाने से मृदा में जैव पदार्थ बढ़ता है जिससे फसलों की सूखा सहने की क्षमता में बढ़ोतरी होती है और फसल उत्पादन प्रभावित नहीं होता है। कुछ ऐसी भी रिपोर्ट्स हैं कि दीर्घकाल में यह उत्पादन अंतर और कम हो जाता है। बहुत से अनुसंधान परिणामों में परंपरागत और जैविक कृषि की पैदावार में कोई अंतर नही पाया गया है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली में जैविक खेती पर बासमती धान–गेहूं फसल चक्र पर दीर्घकालिक अनुसंधान किए गए। परिणामों में पाया गया कि जैविक विधि से उगाए गए बासमती धान की दस वर्षों की औसत उपज 4.5 टन/हेक्टेयर थी, जबकि परंपरागत विधि से बासमती धान उगाने पर लगभग इतनी ही उपज प्राप्त होती है। मोदीपुरम, मेरठ (उत्तर प्रदेश) के द्वारा जैविक खेती पर देश के विभिन्न राज्यों में एक नेटवर्क परियोजना चलाई जा रही है, जिसके 8 फसल–चक्रीय वर्ष पूर्ण हो चुके हैं। इस परियोजना के 8 फसल–चक्रीय वर्ष पूर्ण होने पर मुख्य रूप से निम्नलिखित परिणाम प्राप्त किए गए हैं।

- बासमती धान, सोयाबीन, लहसुन, मूंगफली, फूलगोभी और टमाटर फसलों की जैविक खेती से प्राप्त उपज परंपरागत खेती से प्राप्त उपज से 4 से 6 प्रतिशत अधिक थी।
- मूंग, प्याज, मिर्च, बंदगोभी और हल्दी फसलों की जैविक खेती से प्राप्त उपज परंपरागत खेती से प्राप्त उपज से 7 से 14 प्रतिशत अधिक थी।
- गेहूं, सरसों, मसूर, आलू और राजमा की फसलों की जैविक खेती से प्राप्त उपज परंपरागत खेती से प्राप्त उपज से 5 से 8 प्रतिशत कम थी।
- 6 वर्षों में जैव–कार्बन की मात्रा जैविक खेती करने से 22 प्रतिशत बढ़ गई।
- जैविक खेती करने से परियोजना के सभी केंद्रों पर सूक्ष्म–जीवों की संख्या में वृद्धि पाई गई।

जैविक उत्पादों की गुणवत्ता

यह सिद्ध हो चुका है कि परंपरागत खेती से प्राप्त उत्पादों की तुलना में जैविक उत्पादों की गुणवत्ता बेहतर होती है। कुछ अनुसंधान परिणामों के आंकड़े उपलब्ध हैं। जैविक खेती से प्राप्त उत्पादों की गुणवत्ता का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है–

- जैविक पदार्थों में अधिक शुष्क पदार्थ, खनिज और आक्सीकारक विरोधी तत्व पाए जाते हैं।
- जैविक पशु उत्पादों एवं उनसे प्राप्त मूल्य–संवर्धित उत्पादों में संतृप्त वसीय अम्लों की तुलना में असंतृप्त–वसीय अम्लों की अधिकता होती है, जबकि परंपरागत विधि से प्राप्त पशु उत्पादों में असंतृप्त वसीय अम्लों की तुलना में संतृप्त वसीय अम्लों की अधिकता होती है। अतः जैविक पशु उत्पाद मानव स्वास्थ्य के लिए अधिक लाभकारी हैं।
- 94–100 प्रतिशत जैविक उत्पाद पीड़कनाशी रहित (सुरक्षित खाद्य पदार्थ) पाए गए हैं।
- जैविक सब्जियों में नाइट्रेट की मात्रा 50 प्रतिशत कम होती है जो मानव स्वास्थ्य के लिए हितकर होता है।
- कई अनुसंधान परिणाम सिद्ध करते हैं कि परंपरागत कृषि से

प्राप्त उत्पादों की तुलना में जैविक उत्पाद अधिक स्वादिष्ट होते हैं।

- आक्सीकारक–विरोधी (एंटी–ऑक्सीडेंट्स) तत्वों का मानव स्वास्थ्य बनाए रखने में अपूर्व सहयोग होता है। परंपरागत कृषि से प्राप्त उत्पादों की तुलना में जैविक उत्पादों में औसतन आक्सीकारक–विरोधी तत्वों की मात्रा 50 प्रतिशत अधिक होती है।

जलवायु परिवर्तन, पर्यावरण सुरक्षा एवं मृदा उर्वरता

यदि सूखे यानी अनावृष्टि की स्थिति आती है तो निसंदेह परंपरागत खेती की तुलना में जैविक खेती द्वारा अधिक उत्पादन मिलेगा। चूंकि जैविक खेती के अंतर्गत मृदा में जैव (कार्बनिक) पदार्थ एवं मृदा स्वास्थ्य बेहतर होता है जिसके परिणामस्वरूप मृदा की जलधारण क्षमता बढ़ती है जो फसल को सूखा सहन करने में सहायक सिद्ध होता है। विस्कॉन्सिन समेकित फसल प्रणाली जांच (अमेरिका) के अनुसार सूखे की स्थिति वाले वर्षों में जैविक खेती से अधिक पैदावार तथा सामान्य वर्षा वाले वर्षों में जैविक एवं परंपरागत खेती दोनों में बराबर पैदावार प्राप्त हुई। अनुसंधान परिणाम दर्शाते हैं कि जैविक खेती प्रणालियों में जल का भी दक्ष उपयोग होता है। जैविक खेती अपनाने से मृदा में जैव पदार्थ की मात्रा में वृद्धि होती है जिसके परिणामस्वरूप उसकी जलधारण क्षमता में वृद्धि होती है और अंततः फसल की सूखे को बर्दाश्त करने की क्षमता में वृद्धि होती है।

जैविक खेती पर्यावरण सुरक्षा एवं मृदा उर्वरता वृद्धि में निम्न प्रकार से योगदान दे सकती है–

- जैविक खेती से हरितगृह गैसों (मीथेन, कार्बन–डाई–ऑक्साइड, नाइट्रस ऑक्साइड, सल्फर–डाई–ऑक्साइड) का कम उत्सर्जन होता है।
- मृदा से नाइट्रेट लीचिंग (निक्षालन) में कमी आती है जिससे भूमिगत जल की गुणवत्ता में सुधार आता है।
- मृदा में कार्बन का दीर्घकालीन संचयन होता है जो जलवायु में होने वाले परिवर्तनों के प्रभाव को कम करता है।
- जैविक खेती में मृदा के भौतिक, रासायनिक और जैविक गुणधर्मों में सुधार होता है।

जैव विविधता एवं जैविक खेती

जैविक खेती से जैव विविधता का चहुंमुखी विकास होता है। जैविक खेती में पोषक तत्व एवं पीड़क–प्रबंधन के लिए फसल विविधीकरण और फसल चक्रों पर विशेष ज़ोर दिया जाता है जो मृदा के ऊपर एवं अंदर जैव विविधता को बढ़ाते हैं। मृदा के अंदर एवं बाहर रहने वाले मित्र कीटों एवं अन्य जीवों की संख्या में वृद्धि होती है, जबकि फसल के लिए हानिकारक जीवों की संख्या में कमी आती है। एक अनुसंधान में परंपरागत फार्म की तुलना में जैविक फार्म पर चमगादड़ों की अधिक संख्या पाई गई है।

जैविक खेती में फसल–चक्रों पर विशेष बल दिया जाता है। इन फसल–चक्रों में दलहनी और फलियों वाली फसलों को शामिल किया जाना चाहिए। साथ ही, समय–समय पर हरी खाद की फसलों को भी शामिल किया जाना चाहिए। फसल चक्रों में ऐसी फसलों को शामिल किया जाए जिनके लिए पर्याप्त विपणन सुविधाएं भी उपलब्ध हों। लगातार एक ही प्रकार की फसलों को उगाने से मिट्टी की उर्वराशक्ति में गिरावट आ जाती है। साथ ही, कीड़े–मकोड़ों, बीमारियों और खरपतवारों का नियंत्रण भी एक गंभीर समस्या बन जाता है। उदाहरण के लिए लगातार धान–गेहूं फसल–चक्र अपनाने से गेहुंसा (गुल्ली डंडा) खरपतवार की बढ़वार अधिक होती है जो गेहूं की पैदावार पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। धान के कुछ कीट गेहूं की फसल को नुकसान पहुंचा सकते हैं। अतः ऐसी परिस्थिति में इस फसल–चक्र (धान–गेहूं) का विविधीकरण करके उपरोक्त समस्याओं का निवारण किया जा सकता है।

यदि संभव हो तो फसल–चक्र में हरी खाद को शामिल किया जा सकता है। हरी खाद लगाने से भूमि की उर्वराशक्ति में वृद्धि होती है और अगली फसल के उत्पादन में भी बढ़ोतरी होती है। यदि हरी खाद का फसल–चक्र में समावेश संभव न हो तो युग्म–उद्देशीय दलहनी फसलों जैसे मूंग, लोबिया, उड़द, मटर और ग्वार आदि

जैविक खेती की सफलता के लिए फसल विविधीकरण एक आवश्यक कदम

को उगाया जा सकता है। उपरोक्त फसलों से फलियों को अलग करने के बाद इनके अवशेषों को मिट्टी में मिलाया जा सकता है। इस प्रकार इन युग्म–उद्देशीय दलहनी फसलों को फसल–चक्र में शामिल करने से किसानों की आमदनी और मिट्टी की उर्वराशक्ति में बढ़ोतरी होगी। फसल–चक्र बनाते समय एक बात का ध्यान और रखना चाहिए कि फसलोत्पादन के साधनों का वर्षभर क्षमतापूर्ण ढंग से उपयोग हो सके। फसल–चक्र बनाते समय उसमें फसलों का समावेश ऐसा होना चाहिए कि सिंचाई, बीज, मजदूर, यंत्र आदि जो भी अपने पास उपलब्ध हों, उनका पूर्ण उपयोग हो और साथ ही, घरेलू आवश्यकता की सभी वस्तुएं, जैसे अनाज, दाल, सब्जी, चारा, रेशा तथा धन भी वर्ष भर उपलब्ध होता रहे।

फसल–चक्र में फसलों का चयन जलवायु, मृदा प्रबंधन और आर्थिक पक्ष पर निर्भर करता है। केवल अनुकूल परिस्थितियों में ही फसलों का उत्पादन लाभकर होता है। फसल अनुकूलन का सबसे अच्छा प्रमाण फसल की सामान्य वृद्धि तथा समान रूप से अधिक उपज देने की क्षमता है। इसके अलावा, फसल चक्र में ऐसी फसलों को शामिल किया जाए जिनको बेचने की पर्याप्त सुविधा हो, अर्थात उत्पादन की बाजार में अच्छी मांग हों और कृषक को उसे बेचकर अधिक लाभ की प्राप्ति हो। फसल चक्र अपनाने से जोखिम में कमी आती है, वर्षभर रोजगार मिलता है, संसाधनों का अनुकूलतम उपयोग होता है, फसल सुरक्षा बनी रहती है, मृदा उर्वरता में वृद्धि होती है और सबसे महत्वपूर्ण है– जैव विविधता में वृद्धि।

जैविक खेती में पोषक तत्व प्रबंधन

जैविक खेती में पोषक तत्व प्रबंधन के लिए किसानों को निम्न तथ्यों पर ध्यान देना चाहिए–

- किसी भी कृत्रिम अथवा संश्लेषित उर्वरकों का प्रयोग वर्जित होता है।
- फसल–चक्रों में दलहनी एवं हरी खाद फसलों को शामिल करके।
- पोषक तत्वों की हानियों (मृदाक्षरण) को कम किया जाए।
- मृदा में भारी धातु (पारा, कैडमियम, आर्सेनिक) न पहुंचें।
- मृदा का सही पीएच मान बनाया जाए।
- अकृत्रिम अथवा प्राकृतिक खनिज उर्वरकों का प्रयोग (जिप्सम, रॉक फॉस्फेट) किया जा सकता है।
- कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट (केंचुआ खाद), गोबर की खाद का प्रयोग लाभकारी होता है।
- फसल अवशेषों का प्रयोग।
- जैव उर्वरक (राइज़ोबियम, एजोस्पिरिलम, एजोटोबैक्टर, एजोटोमोनास, माइकोराइजा, पी.एस.बी., धान में नील–हरित शैवाल, आदि)।

पोषक तत्वों के मुख्य स्रोतों के बारे में संक्षेप में जानकारी इस प्रकार हैः

हरी खादः हरी खाद के लिए मुख्य रूप से दलहली फसलें उगाई जाती हैं। इनकी जड़ों में गांठे होती हैं। इन ग्रंथियों में विशेष प्रकार के सहजीवी जीवाणु रहते हैं जो वायुमंडल में पाई जाने वाली नाइट्रोजन का यौगिकीकरण करके मृदा में नाइट्रोजन की पूर्ति करते हैं। दलहनी फसलें मृदा की भौतिक दशा को सुधारने के अलावा उसमें जीवांश पदार्थ की मात्रा भी बढ़ाती हैं। दलहनी फसलें खरपतवारों को नियंत्रित करने में भी सहायक हैं। हरी खाद को दो प्रकार से तैयार किया जा सकता है। (1) हरी पत्तियों वाली हरी खाद– इसमें दूसरी जगह से पेड़–पौधों और झाड़ियों की हरी पत्तियों को एकत्र करके अन्य खेत में समान रूप से फैलाकर हैरो अथवा मिट्टी–पलट हल से मिट्टी में दबा दिया जाता है। यह कार्य मुख्य रूप से भारत के दक्षिणी और मध्य भागों में होता है। (2) फसल को खेत में उगाकर पलटना। इस विधि में जिस खेत में हरी खाद वाली फसलें उगाई जाती हैं, उसी खेत में उपयुक्त नमी में पुष्पावस्था–पूर्व मिट्टी–पलट हल से मिट्टी में दबा दिया जाता है। कभी–कभी हरी खाद को व्यावसायिक फसलों के बीच में उगाकर खाद के रूप में प्रयोग करते हैं। हरी खाद की फसलों में ढ़ेंचा, सनई, लोबिया तथा ग्वार इत्यादि मुख्य हैं।

जैविक खेती में रोजगार के अवसर

- चूंकि जैविक बीज की उपलब्धता में काफी कमी है इसलिए कृषक बीज पैदा करके इसकी उपलब्धता बढ़ा सकते हैं जिससे उनकी आय में वृद्धि के साथ–साथ जैविक खेती के उत्पादन क्षेत्र में भी वृद्धि होगी।
- जैविक खेती से प्राप्त कच्चे पदार्थों का ग्रामीण–स्तर पर मूल्य–संवर्धन किया जा सकता है। किसान अपने जैविक उत्पादों का प्राथमिक खाद्य प्रसंस्करण करके अधिक मुनाफा कमा सकते हैं। फल, सब्जियों एवं दालों आदि से संबंधित प्रसंस्करण इकाईयों को स्थापित करके रोजगार के अवसरों एवं आय में पुनःवृद्धि की जा सकती है।
- जैविक खेती में अनेक आदानों का प्रयोग होता है। उदाहरण के लिए जैविक खेती में कम्पोस्ट, वर्मी कम्पोस्ट, गोबर गैस स्लरी, जैव–पीड़कनाशियों, जैव उर्वरकों आदि की आवश्यकता होती है। अतः उपरोक्त आदानों का उत्पादन एवं विपणन ग्रामीणों द्वारा स्वयं किया जा सकता है जिससे काफी ग्रामीण युवको को रोजगार मिल सकते हैं।
- यदि ग्रामीणों को जैविक खेती पर उपयुक्त प्रशिक्षण दिया जाता है तो इससे उनके कौशल का विकास होगा जिससे अंततः उनका आत्मविश्वास बढ़ेगा और वे रोजगार का सृजन कर सकेंगे।
- ग्रामीण उत्पादक अपने उत्पादों का स्वयं विपणन करके भी रोजगार की प्राप्ति कर सकते हैं।
- जैविक प्रमाणीकरण में भी काफी व्यक्तियों को रोजगार की प्राप्ति होती है।
- चूंकि जैविक खेती में फसल–विविधीकरण एवं फसल–चक्रों पर विशेष बल दिया जाता है, अतः इससे वर्ष भर रोजगार के अवसरों की उपलब्धता रहती है।

सबसे जल्दी और कम समय में नाइट्रोजन यौगिकीकरण करने वाली मुख्य फसल ढैंचा है। इसे धान की रोपाई से पूर्व ऊंचे एवं नीचे स्थानों पर उगा सकते हैं। ताजा हरी खाद की फसल मृदा में मिट्टी पलट हल से दबाने पर सूक्ष्मजीवों की क्रियाशीलता तीव्र हो जाती है जिससे हरी खाद वाली फसल जल्दी सड़–गल जाती हैं और अगली फसल को नाइट्रोजन की आपूर्ति हो जाती है। मृदा में सूक्ष्मजीवों की क्रियाशीलता, मृदा में नाइट्रोजन, कार्बन अनुपात, मृदा तापक्रम, मृदा में नमी और पौधों की आयु व प्रकार पर निर्भर करती हैं। इस प्रकार, हरी खाद वाली फसल को गलाने–सड़ाने में तीव्रता लाने के लिए मृदा में जैविक पदार्थ और कार्बनः नाइट्रोजन का अनुपात 15:1 और 25:1 के मध्य होना अति आवश्यक है। हरी खाद के प्रयोग से मृदा के भौतिक गुणों जैसे मृदा संरचना एवं नमी–धारण क्षमता में पर्याप्त सुधार होता है।

फसल अवशेषः जैविक उत्पादन में फसल अवशेषों का विशेष योगदान हो सकता है। जैविक खेती में इन फसल अवशेषों का पुनर्चक्रीकरण करके लाभ प्राप्त किया जा सकता है। जैविक खेती से प्राप्त विभिन्न फसल अवशेषों जैसे गेहूं का भूसा, कपास के डंठल, गन्ने की सूखी पत्तियां तथा धान का भूसा इत्यादि की कुछ मात्रा का खेत में पुनर्चक्रण किया जा सकता है। कोई प्रयोगों व अनुसंधानों से यह सिद्ध हुआ है कि गेहूं व धान का भूसा डालने से उत्पादन बढ़े या नहीं परंतु भूमि उर्वरता पर अवश्य ही धनात्मक प्रभाव होता है। यद्यपि धान व गेहूं का भूसा डालने पर शुरू में पोषक तत्वों के स्थिरीकरण के कारण इनकी कमी हो जाती है परंतु इसके साथ किसी दलहनी फसल के भूसे को मिलाकर इस घटक को दूर किया जा सकता है। अतः फसल अवशेषों के प्रयोग से मृदा उर्वरता व उत्पादकता को बढ़ाकर संधारित उत्पादन के उद्देश्य को प्राप्त किया जा सकता है।

जैव उर्वरकः जैव उर्वरक विभिन्न प्रकार के सूक्ष्मजीवियों (जीवाणु, कवक, एक्टीनोमाइसिटिस आदि) की जीवित कोशिकाएं होती हैं। कुछ जैव उर्वरकों में नाइट्रोजन यौगिकीकरण व फॉस्फोरस को घोलने की क्षमता होती है जिससे मृदा में पोषक तत्वों को पौधों के लिए उपलब्ध कराया जाता है। पादप पोषण में पूरक, नवीकरणीय तथा पर्यावरणीय स्रोत के रूप में यह एक महत्वपूर्ण घटक हैं तथा जैविक पादप पोषण प्रबंधन का आवश्यक अंग हैं। भारत में इस समय इनके उत्पादन व प्रयोग पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। देश में अनेक जैव उर्वरक उत्पादन इकाईयां स्थापित की जा चुकी हैं जो इस क्षेत्र में काफी योगदान दे रही हैं। साथ ही, किसानों ने भी इनके उपयोग को समझा है। जैव उर्वरकों के बढ़ते हुए उपयोग को देखकर इनकी उत्पादन तकनीक, संरक्षण व उपयोग की विधियों का मानकीकरण तथा विभिन्न कृषि भौगोलिक परिस्थितियों में विविध उपयोग के लिए उपयुक्त जानकारी की आवश्यकता है।

विभिन्न जैव उर्वरकों में फली वाली फसलों के लिए राइजोबियम का सबसे अधिक उपयोग हुआ है। इसके अपेक्षित परिणामों के लिए मृदा अथवा बीज में इनका सही प्रकार से उपयोग आवश्यक है। यद्यपि जैव उर्वरकों के परिणाम बहुत आनिश्चित होते हैं क्योंकि उनका स्वभाव जैविक तथा अजैविक वातावरण के प्रति बहुत ही संवेदनशील होता है। अतः इनसे पोषक तत्वों की पूर्ति को बढ़ाने के लिए अधिक प्रभावी, प्रतियोगी तथा प्रतिबल प्रतिरोधी किस्मों को विकसित करने की आवश्यकता है। फॉस्फोरस घुलनकारी जीवाणु तथा आरबसकुलर माईकोराइजा कवकों का सूक्ष्म तत्वों एवं फॉस्फोरस की उपलब्धता में महत्वपूर्ण योगदान हो सकता है।

भारत में जैविक खेती के विकास में बाधाएं

- जैविक बीजों की कमी।
- किसान से उपभोक्ता तक कुशल विपणन प्रणाली का अभाव। अक्सर किसानों को कम मूल्य मिलता है और उपभोक्ता को अधिक कीमत चुकानी पड़ती है।
- कुछ मामलों में फसल की पैदावार में कमी आ जाती है, खासकर जैविक खेती अपनाने के आरंभ के कुछ वर्षों में। कई बार कम पैदावार मिलने से किसानों में जैविक खेती के प्रति मोह भंग हो सकता है हालांकि सर्वथा ऐसा नहीं है। उपयुक्त प्रशिक्षण प्राप्त करके एवं जैविक खेती की वैज्ञानिक विधियों को अपनाकर फसल उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है।
- रूपांतरण अवधि के दौरान कम आय जैविक खेती के प्रसार में बाधा बनती है।
- किसानों को जैविक उत्पादों की प्रीमियम कीमतों की अनुपलब्धता।
- फसल, मिट्टी और जलवायु परिस्थितियों के लिए प्रौद्योगिकी पैकेजों का अभाव। जैविक उत्पादन प्रणालियों में खरपतवार, कीटनाशक और रोगों

जैविक खेती के लिए उपयुक्त हरी खाद की फसल

के प्रबंधन के लिए पर्यावरण–अनुकूल तकनीकों को विकसित करने के लिए और अधिक शोधों की आवश्यकता है।

- जैविक खाद और जैव उर्वरकों की सीमित उपलब्धता।
- प्रमाणीकरण प्रक्रियाओं में जटिलताएं एवं अधिक खर्च।
- जैविक क्षेत्र में संगठनों के बीच कमजोर संबंध।
- बुनियादी सुविधाओं का अभाव।
- कुछ आदानों की उच्च लागत।

जैविक खेती में कीटों, रोगों और खरपतवारों का प्रबंधन

जैविक खेती में पोषक तत्व प्रबंधन के लिए किसानों को निम्न तथ्यों पर ध्यान देना चाहिए–

- कृत्रिम पीड़कनाशियों (कीटनाशी, कवकनाशी, जीवाणुनाशी, शाकनाशी) का प्रयोग वर्जित रहता है।
- कृत्रिम वृद्धि नियामकों एवं रंगों का प्रयोग सर्वथा वर्जित है।
- आनुवांशिक रूप से निर्मित जीवों तथा उत्पादों का प्रयोग भी वर्जित है।
- निवारक एवं सस्य–विधियों का प्रयोग (बुवाई का समय एवं विधि, पादप संख्या, सिंचाई, फसल चक्र आदि)।
- कीटों एवं रोगों के प्राकृतिक शत्रुओं की संख्या बढ़ाने पर ध्यान।
- चिड़ियों के घोंसलों को नष्ट न किया जाए।
- अनुमत्त यांत्रिक एवं भौतिक विधियों (प्रकाश प्रपंच) विधियों का समुचित प्रयोग।
- शत्रु कीटों के जीवन–चक्र में बाधा उत्पन्न करना।
- आवश्यकतानुसार नीम के तेल का प्रयोग।
- कीटों अथवा खरपतवारों के परजीवी शिकारियों का प्रयोग।
- आवश्यकतानुसार सिरका, चूना, गंधक, हल्के खनिज तेल का प्रयोग।
- मशरूम और क्लोरेला के अर्क का प्रयोग।
- विषाणु विनिर्मित पदार्थ (एनपीवी); कवक विनिर्मित पदार्थ (ट्राइकोडर्मा); जीवाणु विनिर्मित पदार्थ (बेसिलस), परजीवी और परभक्षी आदि का आवश्यकतानुसार उपयोग।

सारांश

साधारणतया जैविक खेती में बाह्य फार्म निवेशों पर निर्भरता में कमी आती है, ऊर्जा उपयोग में कमी आती है, और कृषि आय में वृद्धि होती है। साथ ही मृदा, जल, वायु और पर्यावरण स्वास्थ्य में भी वृद्धि होती है। जैविक खेती अपनाने से मृदा की ऊपरी एवं आंतरिक जैव विविधता में वृद्धि होती है जिससे मृदा स्वास्थ्य में बढ़ोतरी होती है। जहां तक फसल उत्पादकता की बात है तो आरंभ के कुछ वर्षों में यह कम मिलती है। यदि जैविक खेती में उपयुक्त फसल पद्धतियों एवं समुचित फसल प्रबंधन को अपनाया जाए तो परंपरागत खेती के बराबर अथवा उससे अधिक फसल उपज की प्राप्ति की जा सकती है। अच्छी पैदावार लेने के लिए उचित फसल–चक्रों एवं फसल विविधीकरण को अपनाना आवश्यक है। साथ ही, उपयुक्त पोषक तत्व, कीट एवं रोग प्रबंधन भी जरूरी है।

भारत में कुछ विशेष क्षेत्रों, जलवायु एवं परिस्थितियों में जैविक खेती वरदान साबित हो सकती है। जैविक खाद्य पदार्थों की सुरक्षा और गुणवत्ता के बारे में उपभोक्ताओं की बढ़ती जागरूकता के साथ, कृषि प्रणाली की दीर्घकालिक स्थिरता और समान रूप से उत्पादक होने के प्रमाण देखते हुए, जैविक खेती को अधिक संख्या में किसानों द्वारा अपनाया जाने वाला है। जैविक उत्पादों का घरेलू और साथ ही अंतरराष्ट्रीय बाजार हाल के दिनों में काफी तेजी से बढ़ रहा है। इसके आर्थिक, सामाजिक, स्वास्थ्य और पर्यावरणीय लाभों को देखते हुए यह कहा जा सकता है कि सतत ग्रामीण विकास में इसके योगदान की अपार संभावनाएं हैं। ग्रामीण युवाओं के रोजगार के लिए एक महान अवसर जैविक उत्पादों और आदानों के उत्पादन, प्रसंस्करण और विपणन में मौजूद है। हालांकि, जैविक खेती में किसानों और अन्य हितधारकों को कई प्रकार की बाधाओं का सामना करना पड़ता है और इनको दूर करना भी महत्वपूर्ण है। भारत में किसानों की संख्या और रूचि को देखकर यह आसानी से महसूस किया जा सकता है कि भारत धीरे–धीरे लेकिन लगातार जैविक खेती की ओर बढ़ रहा है।

(डॉ. दिनेश कुमार और डॉ. वाई.एस. शिवे भा.कृ.अ.प– भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के सस्य विज्ञान संभाग में प्रधान वैज्ञानिक हैं।)

ई–मेल : dineshctt@yahoo.com, ysshivay@hotmail.com

जैविक खेती एवं कृषि आय

जैविक खेती को अपनाकर ग्रामीणों की आमदनी बढ़ाने के पर्याप्त अवसर उपलब्ध होते हैं। जैविक उत्पादों के निर्यात को बढ़ाकर इनसे प्राप्त आय को बढ़ाया जा सकता है। भारत जैविक विधि से उत्पादित सोयाबीन, कपास, चीनी, तिलहन, दलहन, बासमती, धान, मसाले, चाय, फल, सूखे फल, सब्जियां, कॉफी और उनसे प्राप्त मूल्य–संवर्धित उत्पादों का निर्यात करता है। इससे अप्रत्यक्ष रूप से कृषकों की आय में बढ़ोतरी होती है। साथ ही, घरेलू बाजार में भी जैविक उत्पादों की मांग लगातार बढ़ती जा रही है जिससे कृषकों को अच्छे लाभ की संभावनाएं दिनों–दिन बढ़ रही हैं। आमतौर पर बाजार में जैविक उत्पाद कुछ महंगे मिलते हैं और आम आदमी की पहुंच से दूर होते हैं। परंतु जो उपभोक्ता इन महंगे उत्पादों को खरीद सकते हैं, उन्हें ऐसा कर लेना चाहिए क्योंकि इन उत्पादों से मानव स्वास्थ्य अच्छा रहता है। प्रक्षेत्र–स्तर पर जैविक उत्पादन में लगभग 15–20 प्रतिशत कम लागत आती है और जैविक उत्पादों की बिक्री पर अमूमन 25–50 प्रतिशत तक प्रीमियम (अधिक मूल्य) मिलता है। यदि जैविक खेती में फसलों का उचित प्रकार से प्रबंधन किया जाए तो अच्छी आमदनी हो सकती है। साथ ही, फसल विविधीकरण के कारण अलग–अलग फसलों की बुवाई, फसल प्रबंधन एवं कटाई आदि कार्य वर्षभर चलते रहते हैं जिससे रोजगार के अवसर बढ़ते हैं एवं ग्रामीणों की आय में वृद्धि होती है।

भारत में जैविक प्रमाणीकरण एवं विपणन

–डॉ. शालिनी फर्त्याल एवं डॉ. कृष्ण चंद्र

जैविक के बाजार का आकार उपभोक्ताओं की मांग पर निर्भर करता है और मांग का आकार उनकी जागरूकता पर निर्भर करता है। विदेशों में जैविक खाद्य के प्रति बढ़ी हुई जागरूकता की वजह से उन देशों में आयात होने वाले खाद्य उत्पादों में जैविक उत्पादों का प्रतिशत ज्यादा होता है। कई देशों में भारतीय उत्पादों की मांग हमेशा से ही अधिक रही है, वहां भी अब जैविक खाद्य उत्पादों को ही वरीयता दी जाने लगी है।

विगत कई वर्षों में मनुष्यों द्वारा हानिकारक रसायनों का विभिन्न क्षेत्रों में उपयोग करने के परिणामस्वरूप विभिन्न पारिस्थितिकी तंत्रों के जैव तथा अजैव दोनों ही घटकों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता जा रहा है, जो पृथ्वी पर जीवन के लिए खतरा बना हुआ है। कृषि एक ऐसा विस्तृत क्षेत्र है जिसमें हानिकारक रसायनों के लगातार प्रयोग का दुष्परिणाम पृथ्वी पर जीवन के विभिन्न हिस्सों पर सीधा पड़ता दिखाई देता है। कृषि के इस परिदृश्य के समाधान के रूप में अधिकांश देशों में जैविक खेती को बढ़ावा दिया जा रहा है, जिनमें भारत भी शामिल है। देश में स्वास्थ्यवर्धक भोजन की उपलब्धता, मृदा की उर्वरता तथा पर्यावरण संरक्षण हेतु व विभिन्न देशों में हमारे देश से आयात होने वाले उत्पादों में जैविक उत्पादों की बढ़ती मांग को देखते हुए, देश में जैविक खेती के अधिकाधिक प्रसार की आवश्यकता दिन–पर–दिन बढ़ती जा रही है। ऐसे में जैविक के नाम पर मिलने वाले उत्पादों के वास्तव में जैविक होने के आश्वासन अथवा प्रमाण की मांग उपभोक्ता द्वारा होना निश्चित रूप से स्वाभाविक है।

जैविक प्रमाणीकरण की आवश्यकता

प्रमाणीकरण के माध्यम से ग्राहक विश्वास योग्य उत्पादों को आसानी से पहचान सकता है और साथ ही, विश्वसनीयता, पारदर्शिता, पारगम्यता आदि के साथ जैविक उत्पादक/किसान व ग्राहक के बीच एक विश्वास स्थापित होता है, जोकि जैविक उत्पादों के स्थायी बाज़ार को स्थापित करने हेतु एक महत्वपूर्ण अंग है।

जैविक प्रमाणीकरण क्या है?

जैविक प्रमाणीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा उत्पादक एक लिखित और समर्थित आश्वासन प्राप्त करता है कि वह विशेष मानक के अनुपालन के तहत उत्पादों का उत्पादन कर रहा है। दूसरे शब्दों में, जैविक प्रमाणीकरण, उत्पाद के जैविक होने पर उपभोक्ताओं का विश्वास बनाने के लिए, धोखाधड़ी रोकने और वाणिज्य को बढ़ावा देने हेतु उत्पादन की प्रक्रिया सत्यापन पर आधारित एक गुणवत्ता आश्वासन प्रणाली है जिसको प्रलेखित प्रतीक चिन्ह या कथन के रूप में उत्पाद के जैविक होने के प्रमाण स्वरूप में प्रदर्शित किया जाता है।

व्यापक अर्थों में देखा जाए तो भारत में दो प्रमाणन प्रणालियां चल रही हैं, पहली, 'तृतीय पक्ष प्रमाणीकरण प्रणाली' व दूसरी 'सहभागिता प्रतिभूति प्रणाली'/पी.जी.एस। दोनों ही प्रणालियां जैविक उत्पादन के राष्ट्रीय मानकों पर आधारित हैं।

- 'तृतीय पक्ष प्रमाणीकरण प्रणाली'– निर्यात के लिए अनिवार्य है व घरेलू बाज़ार में स्वैच्छिक है। 'सहभागिता प्रतिभूति प्रणाली'/पी.जी.एस– केवल घरेलू/राष्ट्रीय जैविक बाजार के लिए लागू है।

तृतीय पक्ष प्रमाणीकरण प्रणाली

जब उत्पादक/किसान व उपभोक्ता से अलग एक तृतीय पक्ष

(प्रमाणन एजेंसी/सर्टिफिकेशन बॉडी) द्वारा जैविक प्रमाणीकरण किया जाता है, उसको तृतीय पक्ष प्रमाणीकरण प्रणाली के नाम से जाना जाता है। इसके तहत भारत में 'राष्ट्रीय जैविक उत्पादन कार्यक्रम' प्रचलित नाम 'एनपीओपी' (NPOP) जोकि प्रत्यायन और प्रमाणन (Accreditation and Certification) के लिए एक संस्थागत प्रणाली है, की शुरुआत वर्ष 2001 से की गई, जिसमें प्रमाणन निकायों (सर्टिफिकेशन बॉडीज़) को मान्यता देना, जैविक उत्पादन के लिए मानकों का निर्धारण तथा जैविक खेती को बढ़ावा देना आदि कार्य शामिल हैं। इस प्रणाली में एनपीओपी के तहत मान्यता प्राप्त एक प्रमाणन एजेंसी/सर्टिफिकेशन बॉडी जब निरीक्षण और ऑडिट आयोजित करके जैविक मानक के अनुपालन की पुष्टि करती है तब जैविक उत्पादक/किसान को स्कोप सर्टिफिकेट/जैविक प्रमाणपत्र जारी होता है।

राष्ट्रीय जैविक उत्पाद कार्यक्रम भारत सरकार के वाणिज्य मंत्रालय के माध्यम से विकसित तथा क्रियान्वित किया जाता है जिसके लिए एक 'राष्ट्रीय संचालन समिति' (नेशनल स्टेरिंग कमेटी) का गठन किया गया, जोकि 'राष्ट्रीय प्रत्यायन निकाय' के रूप में भी कार्य करती है। 'राष्ट्रीय प्रत्यायन निकाय' शीर्ष निर्णय लेने वाला प्रत्यायन निकाय है और कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण/एपीडा, वाणिज्य मंत्रालय इसके सचिवालय के रूप में कार्य करता है।

उत्पादन और मान्यता प्रणाली के लिए एनपीओपी मानकों को विभिन्न देशों के मानकों के बराबर मान्यता प्राप्त है। इन मान्यताओं के साथ, जब भारतीय जैविक उत्पादों को भारत के मान्यता प्राप्त प्रमाणन निकायों द्वारा विधिवत प्रमाणित किया जाता है, उसके बाद वो आयात करने वाले देशों द्वारा स्वीकार किए जाते हैं।

तृतीय पक्ष प्रमाणीकरण प्रणाली में प्रमाणीकरण प्रक्रिया

- सर्टिफिकेशन बॉडी द्वारा प्रमाणीकरण के लिए आवेदन लेना
- सर्टिफिकेशन बॉडी द्वारा मानक और परिचालन के दस्तावेज प्रदान करना
- उत्पादक/किसान व सर्टिफिकेशन बॉडी के बीच समझौता
- उत्पादक/किसान से फीस की मांग
- आंतरिक नियंत्रण प्रणाली (इंटरनल कंट्रोल सिस्टम/आई.सी.एस) की स्थापना
- संपूर्ण उत्पादन प्रक्रिया का दस्तावेजीकरण
- दस्तावेज़ की ऑडिट
- उत्पादक/किसान समूहों में आंतरिक निरीक्षण
- ट्रेसनेट (Tracenet) पर डाटा का रखरखाव
- बाहरी निरीक्षण
- निरीक्षक द्वारा रिपोर्टिंग
- समीक्षक द्वारा समीक्षा
- प्रमाणीकरण का निर्णय

'राष्ट्रीय जैविक उत्पादन कार्यक्रम' का प्रतीक चिन्ह/लोगो

भारत में कुल 29 मान्यता–प्राप्त प्रमाणन एजेंसीज़/सर्टिफिकेशन बॉडीज़ वर्तमान में कार्यरत हैं, कोई भी जैविक उत्पादक/किसान इनमें से किसी भी सर्टिफिकेशन बॉडी से संपर्क कर एनपीओपी के तहत जैविक प्रमाणपत्र प्राप्त करने के लिए पंजीकरण/रजिस्ट्रेशन करा सकता है।

सहभागिता प्रतिभूति प्रणाली

यह गुणवत्ता के आश्वासन की एक स्थानीय रूप से लागू ऐसी प्रक्रिया है जिसमें उत्पादक से लेकर उपभोक्ता तक सभी हितधारकों की सक्रिय भागीदारी के आधार पर उत्पादकों को प्रमाणित किया जाता है। इस प्रणाली को भागीदारों के स्थानीय छोटे समूह द्वारा ही कार्यान्वित किया जाता है। मानकों के अनुपालन के आधार पर स्थानीय समूह ही प्रमाणीकरण का निर्णय लेता है। अर्थात भागीदारों की सहभागिता को सुनिश्चित कर के प्रमाणीकरण किया जाता है, इसीलिए इसे 'सहभागिता प्रतिभूति प्रणाली' (अथवा अंग्रेज़ी में 'पार्टिसिपेटरी गारंटी सिस्टम' तथा संक्षेप में इसे पी.जी.एस.) कहा जाता है।

2004 में, इंटरनेशनल फेडरेशन ऑफ़ आर्गेनिक एग्रीकल्चर मूवमेंट (IFOAM) और लैटिन अमेरिकन एग्रोकोलॉजी मूवमेंट ने संयुक्त रूप से टोरेस, ब्राज़ील में प्रमाणीकरण के दूसरे विकल्प तलाशने के लिए पहली अंतर्राष्ट्रीय कार्यशाला का आयोजन किया। उस कार्यशाला में पार्टिसिपेटरी गारंटी सिस्टम की अवधारणा को अपनाया गया था। तब से आईएफओएएम (IFOAM) ने पीजीएस के विकास का लगातार समर्थन किया है। आज भी लगातार जैविक क्षेत्र में पी.जी.एस. को पहचान दिलाने के लिए एक कार्यक्रम चला रहा है और अब सरकार द्वारा मान्य स्थानीय प्रमाणन प्रणाली के रूप में पी.जी.एस. को मान्यता देने की भी वकालत कर रहा है। इस क्रम में भारत में खाद्य और कृषि संगठन (एफ.ए.ओ.), कृषि मंत्रालय और आईएफओएएम के परामर्श के परिणामस्वरूप पीजीएस ऑर्गेनिक इंडिया कौंसिल की स्थापना 2006 में हुई, इसने भारत में घरेलू उपभोग के लिए जैविक खाद्य उत्पादन को बढ़ावा देने के लिए स्वैच्छिक संगठनों या गैर–सरकारी संगठनों के अनौपचारिक गठबंधन के रूप में कार्य किया। अप्रैल 2011 में, इसे औपचारिक रूप से गोवा में 'सहभागिता प्रतिभूति प्रणाली ऑर्गेनिक कौंसिल' (PGSOC) के रूप में पंजीकृत किया गया जबकि राष्ट्रीय–स्तर पर, कृषि मंत्रालय के तहत पी.जी.एस. को राष्ट्रीय जैविक कृषि केंद्र (एन.सी.ओ.एफ) ने पी.जी.एस.–राष्ट्रीय सलाहकार समिति के साथ पी.जी.एस.–इंडिया नाम से एक स्वैच्छिक जैविक गारंटी कार्यक्रम के रूप में संचालित करना शुरू किया। पी.जी.एस.–इंडिया के संचालन के लिए 'पी.जी.एस.–राष्ट्रीय सलाहकार समिति' का गठन शीर्ष निर्णय लेने वाली संस्था के रूप में हुआ और राष्ट्रीय जैविक खेती केंद्र का पी.जी.एस.–इंडिया के सचिवालय के तौर पर कार्य करना तय हुआ। इस तरह, ब्राजील के बाद भारत दूसरा ऐसा देश है जहां पी.जी.एस. सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त अथवा सरकार द्वारा संचालित प्रमाणीकरण प्रणाली है।

'सहभागिता प्रतिभूति प्रणाली'/ पी.जी.एस.–इंडिया के दो प्रतीक चिन्ह

देश की कुछ संस्थाएं क्षेत्रीय परिषद (रीजनल कौंसिल/ आर.सी.) के रूप में अधिकृत की जाती हैं जो किसानों के समूहों को पंजीकृत करके पी.जी.एस. के नियमों व दिशा–निर्देशों के तहत उन्हें जैविक खेती करने व पी.जी.एस. के समुचित संचालन हेतु मार्गदर्शन और समर्थन करतीं हैं। वर्तमान में कुल 326 सक्रिय अधिकृत क्षेत्रीय परिषद भारत में पी.जी.एस.–इंडिया के तहत कार्यरत हैं, कोई भी जैविक किसान समूह अपने क्षेत्र में अधिकृत किसी भी क्षेत्रीय परिषद के साथ पंजीकरण करा कर अपने समूह के जैविक प्रमाणीकरण प्रक्रिया का हिस्सा बन सकता है।

'सहभागिता प्रतिभूति प्रणाली' (पार्टिसिपेटरी गारंटी सिस्टम/ पी.जी.एस.) में प्रमाणीकरण प्रक्रिया

- क्षेत्रीय परिषद (रिजनल कौंसिल/आर.सी) के साथ उत्पादक/ किसान समूह का पंजीकरण।
- उत्पादक/किसान समूह के हर सदस्य की बुनियादी जानकारी प्रस्तुत करना।
- समूह के सदस्य खुद आंतरिक नियंत्रण प्रणाली का गठन करते हैं – कोई बाहरी सदस्य नहीं होता।
- 'सहकर्मी मूल्यांकन' (पियर अप्रेज़ल) के रूप में सरल प्रलेखन किया जाता है।
- समूह के सदस्यों द्वारा आंतरिक निरीक्षण किया जाता है।
- पी.जी.एस.–इंडिया पोर्टल पर डाटा का रखरखाव होता है।
- समूह खुद ही प्रमाणन अनुपालन पर निर्णय लेता है।
- क्षेत्रीय परिषद (आर.सी) को निर्णय प्रस्तुत करना होता है।
- क्षेत्रीय परिषद (आर.सी) द्वारा उत्पादक/किसान समूह को प्रमाणपत्र दिया जाता है।

उपरोक्त पूरी प्रक्रिया में हर स्तर पर जिसमें भी कोई कार्य को करने में पंजीकृत किसान असमर्थता ज़ाहिर करते हैं क्षेत्रीय परिषद उनके समूहों की सहायता करती है। समय–समय पर किसान समूहों की जैविक खेती व पी.जी.एस. के विभिन्न विषयों पर मीटिंग व ट्रेनिंग करवाना तथा उनको प्रमाणीकरण प्रक्रिया में आत्मनिर्भर बनाने का कार्य क्षेत्रीय परिषद का है।

जैविक उत्पादों का विपणन

जैविक के बाजार का आकार उपभोक्ताओं की मांग पर निर्भर करता है और मांग का आकार उनकी जागरूकता पर निर्भर करता है। विदेशों में जैविक खाद्य के प्रति बढ़ी हुई जागरूकता की वजह से उन देशों में आयात होने वाले खाद्य उत्पादों में जैविक उत्पादों का प्रतिशत ही ज्यादा होता है। कई देशों में भारतीय उत्पादों की मांग हमेशा से ही अधिक रही है, वहां भी अब जैविक खाद्य उत्पादों को ही वरीयता दी जाने लगी है। अतः विदेशों को निर्यात होने वाले सामान का बहुत बड़ा हिस्सा तृतीय पक्ष प्रमाणीकरण प्रणाली से प्रमाणित जैविक खाद्य उत्पादों के लिए अच्छे अवसर देता है। जबकि भारतीयों में जैविक के प्रति जागरूकता का प्रतिशत बहुत कम है, साथ ही जैविक खाद्यों की कीमत तुलनात्मक दृष्टि से अधिक होने के कारण विशेषतः मध्यम व निम्नवर्गीय उपभोक्ताओं की पहुंच से दूर है। पी.जी.एस. द्वारा प्रमाणित जैविक उत्पादों का प्रमाणीकरण मूल्य कम होने के कारन विक्रय मूल्य कम हो जाता है जिससे वे सभी वर्गों के उपभोक्ताओं की पहुंच में भी आ जाते हैं। पी.जी.एस. द्वारा प्रमाणित किसानों को अपना जैविक उत्पाद बेचने के लिए अलग–अलग तरीके को अपनाना होता है।

तृतीय पक्ष प्रमाणीकरण प्रणाली से प्रमाणित जैविक उत्पाद तीन वर्ष बाद पूर्ण जैविक के प्रमाणीकरण के बाद ही बाज़ार में जैविक के नाम से बेचे जा सकते हैं। उन उत्पादों को विदेशी बाज़ार को निर्यात करना एक अच्छी आमदनी का स्रोत है, साथ ही, भारतीय बाजार में भी ये उत्पाद विभिन्न कंपनियों के ब्रांड नाम से बिकते हैं।

पी.जी.एस.–इंडिया से प्रमाणित जैविक उत्पादों कों भी तीन वर्ष बाद पूर्ण जैविक के नाम से (पी.जी.एस.–इंडिया आर्गेनिक प्रतीक चिन्ह के साथ) बेचा जा सकता है परंतु उससे पहले भी

दोनों प्रणालियों में भिन्न्ता

तृतीय पक्ष प्रमाणीकरण प्रणाली	'सहभागिता प्रतिभूति प्रणाली'
व्यापक प्रलेखन/ज्यादा कागज़ी कार्यवाही और तीसरे पक्ष द्वारा सत्यापन होता है	सरल प्रलेखन/ कम कागज़ी कार्य और क्षेत्रीय परिषद सूत्रधार का कार्य करती है।
अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में प्रक्रियाओं को व्यापक रूप से स्वीकार किया जाता है/ दूसरे देशों में जैविक उत्पाद को निर्यात किया जा सकता है।	केवल देश के अंदर घरेलू बाज़ार में ही बेचा जा सकता है। या जिन देशों के बीच पीजीएस प्रमाणित उत्पादों के आयात के लिए कोई पारस्परिक समझौता हुआ हो।
लागत गहन	कम लागत
उत्पादक, उत्पादक समूहों, प्रसंस्करण सुविधाओं के लिए प्रमाणीकरण।	केवल उत्पादक समूहों पर लागू होता है।

प्रथम वर्ष से ही किसानों को जैविक रूपांतरण के तहत (पी.जी.एस.–इंडिया ग्रीन के प्रतीक चिन्ह के साथ) प्रमाणपत्र मिलता है, जिसे वो किसी भी ग्राहक को दिखा कर ग्राहक की स्वीकृति के साथ बेच सकता है। पी.जी.एस. प्रमाणित जैविक उत्पाद को बेचने के लिए मुख्यतः भारत का घरेलू बाजार ही है। पी.जी.एस.– इंडिया के तहत कोई किसान चाहे तो अपना उत्पाद व्यक्तिगत रूप से किसी को भी बेच सकता है या फिर समूह के साथ मिल कर भी सामूहिक रूप से माल को किसी ग्राहक को बेचने के तरीके अपना सकता है।

क्षेत्रीय परिषद किसानों के जैविक उत्पादों कों खरीद कर या उनको बाज़ार उपलब्ध करवाने में भी सहायता करती है।

प्रशासन या क्षेत्रीय परिषदों की सहायता से कुछ जिलों में साप्ताहिक जैविक हाट लगाए जाते हैं जहां किसान जैविक उत्पाद बेचने के लिए आते हैं।

समूह स्वयं का स्थानीय बाजार विकसित करने की कोशिश करता है जिसमें उपभोक्ता व उनके बीच कोई अन्य कड़ी नहीं होती– बहुत से जैविक उत्पादों के ब्रांड स्वयं किसानों के सामूहिक प्रयास का नतीजा हैं।

एक नया जैविक खेती पोर्टल (http://jaivikkheti.in) भी किसानों को अपना उत्पाद बेचने के लिए ऑनलाइन मार्केट प्लेटफॉर्म देने के लिए बनाया जा रहा है। इस नए पोर्टल को पी.जी.एस.– इंडिया पोर्टल के साथ लिंक किया गया है जिससे पी.जी.एस.–इंडिया से प्रमाणीकरण प्राप्त करने के साथ ही किसानों और उपभोक्ता के बीच सीधा व्यापार संपर्क साधने की शुरुआत हो जाती है।

भारतीय खाद्य सुरक्षा और मानक प्राधिकरण (एफ.एस.एस.ए.आई./FSSAI)– जैविक खाद्य के लिए नियम

जैविक खाद्य के लिए नए नियमों, खाद्य सुरक्षा और मानक (ऑर्गेनिक फूड्स) विनियम, 2017, को भारत के राजपत्र में 29.12.2017 को अधिसूचित किया गया है। नियमों के अनुसार, देश में जो भी जैविक खाद्य पदार्थ बेचे जाते हैं, उनका 'तृतीय पक्ष प्रमाणीकरण प्रणाली' या भारत के 'सहभागिता प्रतिभूति प्रणाली' (पीजीएस–इंडिया) के तहत प्रमाणित होना आवश्यक है तथा सभी जैविक खाद्य व्यवसायों को मानदंडों का पालन करने के लिए 30 सितंबर, 2018 तक एफ.एस.एस.ए.आई. से आवश्यक लाइसेंस प्राप्त करने के लिए कहा गया। साथ ही, अब भारत के बाज़ार में सभी जैविक उत्पादों पर भारतीय खाद्य सुरक्षा और मानक प्राधिकरण के जैविक प्रतीक चिन्ह/लोगो– 'जैविक भारत' का लगा होना ज़रूरी है।

मोबाइल जैविक दुकानों के साथ किसान अपना उत्पाद बेचने जाते हुए

हालांकि, उपभोक्ता को जैविक खाद्य की प्रत्यक्ष/सीधी बिक्री करने वाले छोटे मूल निर्माता/निर्माता संगठन, जिनका जैविक उत्पाद का वार्षिक कारोबार 12 लाख रुपये से अधिक नहीं है, उनकों 1 अप्रैल, 2020 तक अनुपालन के सत्यापन की आवश्यकता से छूट दी गई है। साथ ही, उन्हें बिना किसी सर्टिफिकेशन तृतीय पक्ष प्रमाणीकरण प्रणाली/पीजीएस–इंडिया के बिना ऑर्गेनिक फूड बेचने की अनुमति दी गई है। यह छूट प्रसंस्कृत/प्रोसेस्ड जैविक खाद्य उत्पादों पर लागू नहीं होती है। एग्रीगेटर्स या बिचौलिएं, जिनका जैविक उत्पादन का बिक्री कारोबार प्रति वर्ष रुपये 50 लाख से अधिक नहीं है, के लिए भी प्रमाणन मानदंडों में ढील दी गई है। ये सभी ढील जैविक खाद्य खुदरा कंपनियों पर लागू नहीं होतीं हैं।

निष्कर्ष

जैविक खेती करने वाले भारत के छोटे व गरीब किसानों को ध्यान में रखते हुए जैविक खेती के प्रमाणीकरण हेतु पी.जी.एस. ऐसी व्यवस्था है जिसमें किसानों द्वारा स्वयं भागीदारी करते हुए आपस में ही जैविक खेती की पूरी प्रक्रिया को सत्यापित किया जाता है। क्योकि पी.जी.एस. में प्रमाणीकरण की दूसरी व्यवस्था की तरह किसी तृतीय पक्ष द्वारा किए जाने वाले निरीक्षण दौरे एवं दस्तावेजों की आवश्यकता समाप्त हो जाती है, अतः परिणामस्वरूप प्रमाणीकरण करवाने हेतु किसानों पर आर्थिक बोझ नहीं पड़ता। हमारा देश पी.जी.एस.–इंडिया वेब पोर्टल https://pgsindia-ncof.gov.in/ को जुलाई 2015 में लांच करते हुए, पी.जी.एस. की प्रक्रिया को ऑन लाइन करने वाला विश्व का सर्वप्रथम देश बन चुका है। वर्तमान में कुल 2.5 लाख से अधिक किसानों को जैविक खेती के साथ–साथ पी.जी.एस. प्रमाणीकरण से जोड़ा जा चुका है। इसके फलस्वरूप आज पूरे विश्व में होने वाले पी.जी.एस. प्रमाणीकरण का 80 प्रतिशत से अधिक हिस्सा अकेले भारत देश का योगदान है। इस तरह देश के अधिकाधिक किसानों को जैविक खेती से जोड़ने तथा व्यापक घरेलू बाज़ार में प्रमाणित जैविक उत्पादों की उपलब्धता सुनिश्चित करने हेतु पी.जी.एस. को महत्वपूर्ण माध्यम के तौर पर विकसित किया जाना लाभप्रद ही साबित होगा।

(डॉ. कृष्ण चंद्र एवं डॉ. शालिनी राष्ट्रीय जैविक खेती केंद्र, कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, भारत सरकार में क्रमशः निदेशक और कनिष्ठ वैज्ञानिक अधिकारी हैं।)

ई–मेल : phartyals9@gmail.com

जैविक खेती से फल उत्पादन की संभावनाएं

–डॉ. राधा मोहन शर्मा, डॉ. अनिल कुमार दुबे एवं नरेन्द्र सिंह

जैविक फल उत्पादन स्वच्छ प्रौद्योगिकी का पर्याय बन गया है। इस विधि में कम सिंचाई के साथ मृदा कार्बन का ह्रास भी कम होता है एवं जैव विविधता में भी वृद्धि होती है, किंतु कम उत्पादन इस विधि का एक नकारात्मक पहलू है। लेकिन उपभोक्ता का यह विश्वास कि जैविक फल उत्पादन स्वास्थ्य एवं गुणवत्ता के दृष्टिकोण से उत्तम है, इन उत्पादों की मांग एवं कीमत को बढ़ाने में सहायक सिद्ध हुआ है।

अनिवार्य रूप से, जैविक फल उत्पादन से तात्पर्य एक ऐसी कृषि प्रणाली से है जिसमें अकार्बनिक उपचार रासायनिक या जैव–तकनीकी एवं आनुवांशिक रूप से संशोधित जीवों के हस्तक्षेप के बिना सहायक जैविक प्रक्रियाओं को शामिल किया जाता है। हरितक्रांति के समय में भारत के कृषि उत्पादन में अप्रत्याशित बढ़ोतरी हुई, लेकिन इसमें प्रयोग होने वाली तकनीकियों की रासायनिक उर्वरकों एवं पादप सुरक्षा रसायनों पर निर्भरता इसकी मुख्य कमी रही। इसने मृदाक्षरण, जल–स्तर में कमी, मृदा लवणता, मृदा एवं भूजल प्रदूषण, आनुवांशिक क्षरण, फलों की गुणवत्ता में ह्रास एवं बढ़ती उत्पादन लागत जैसी गंभीर समस्याओं को जन्म दिया है।

व्यावहारिक रूप से जैविक फलों के उत्पादन में, हम आसानी से घुलनशील खनिज उर्वरक को प्राकृतिक उर्वरकों (खाद, घोल), हरी खाद, गीली घास, विभिन्न फसल–चक्रों और मिट्टी की सावधानीपूर्वक खेती से; खरपतवारनाशी रसायनों को यांत्रिक या थर्मल साथी फसल नियंत्रण और कवर फसल प्रबंधन से एवं कृत्रिम रासायनिक कीटनाशकों को मृदा स्वास्थ्य में सुधार, स्थान विशिष्ट प्रजातियों का चयन, प्रतिरोधी किस्मों का उपयोग करके और प्राकृतिक सक्रिय एजेंटों का उपयोग करके विस्थापित कर सकते हैं।

सामान्य तौर पर बायो–डायानामिक खेती और कार्बनिक खेती जैविक खेती की दो दिशाएं हैं। एक जर्मन दार्शनिक और वैज्ञानिक डॉ. रुडोल्फ स्टीनर द्वारा प्रस्तावित बायो–डायनामिक खेती कृषि का एक आत्मनिर्भर रूप है, जो अस्तित्व के सबसे सूक्ष्म–स्तर पर काम कर रही सभी सर्वोत्कृष्ट शक्तियों को ध्यान में रखती है। मृदा क्रियाओं में कॉस्मिक नक्षत्रों को भी ध्यान में रखा जाता है। कार्बनिक जैविक खेती, स्विस कृषि विशेषज्ञ डॉ हंस मुलर द्वारा सार्वजनिक स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुए दी गई एक अवधारणा है। एक स्वस्थ मिट्टी स्वस्थ पौधों और जानवरों के लिए आवश्यक पूर्व शर्त है, और परिणामस्वरूप स्वस्थ मनुष्यों के लिए भी। इस

विधि में फसलों की एक विस्तृत विविधता और लाभकारी प्रजातियों के लिए अनुकूल परिस्थितियों के निर्माण के साथ फसल चक्रीकरण (रोटेशन) की तकनीक द्वारा कृत्रिम उर्वरकों और कीटनाशकों के उपयोग को कम करने का प्रयास किया जाता है।

भारत में उगाई जाने वाली विभिन्न फसलों में, बागवानी फसलें मानव आहार का बहुत महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। इनमें स्वास्थ्यवर्धक पदार्थों की उच्च सांद्रता की उपस्थिति के कारण, फलों को सुरक्षात्मक भोजन के रूप में भी जाना जाता है। प्रयोगों से यह सिद्ध हो चुका है कि जैविक खेती द्वारा पैदा किए गए बेर, लीची, संतरा, अंगूर, आम, अनानास आदि रंग, मिठास, खटास तथा वाष्पशील यौगिकों की उपलब्धता के दृष्टिकोण से अन्य विधि द्वारा पैदा किए गए फलों की तुलना में उत्तम पाए गए हैं। इसके अलावा, बागवानी क्षेत्र भारत में कृषि निर्यात और कृषि जीडीपी का प्रमुख योगदानकर्ता है। इसलिए, बेहतर फलों की गुणवत्ता की वैश्विक मांग को पूरा करने और भारतीय अर्थव्यवस्था में फलों की फसलों के योगदान को बेहतर बनाए रखने के लिए भारतीय फल उत्पादन प्रणाली को लंबे समय तक टिकाऊ बनाना आवश्यक है। जैविक फल उत्पादन स्वच्छ प्रौद्योगिकी का पर्याय बन गया है। इस विधि में कम सिंचाई के साथ मृदा कार्बन का ह्रास भी कम होता है एवं जैव विविधता में भी वृद्धि होती है, किंतु कम उत्पादन इस विधि का एक नकारात्मक पहलू है। लेकिन उपभोक्ता का यह विश्वास चूंकि जैविक फल उत्पादन स्वास्थ्य एवं गुणवत्ता के दृष्टिकोण से उत्तम है, इन उत्पादों की मांग एवं कीमत को बढ़ाने में सहायक सिद्ध हुआ है।

यूरोपीय संघ के विनियमन 2092/91 के तहत, जैविक उत्पादन में इस्तेमाल होने वाली सामग्री में 5 प्रतिशत से अधिक (प्रसंस्करण के समय वजन के प्रतिशत के रूप में) सामग्री गैर–कार्बनिक मूल की नहीं होनी चाहिए। एक कार्बनिक प्रबंधन प्रणाली की स्थापना और मिट्टी की उर्वरता के निर्माण के लिए रूपांतरण अवधि की आवश्यकता होती है। फल वृक्षों के मामले में, पहली तुड़ाई इन मानकों के तहत निर्धारित आवश्यकताओं के अनुसार कम से कम छत्तीस (36) महीनों के जैविक प्रबंधन के बाद ही जैविक उत्पाद के रूप में प्रमाणित हो सकती है। प्राकृतिक रूप से उगे जंगली फल पौधों और भागों के संग्रह को जैविक उत्पाद के रूप में प्रमाणित किया जा सकता है, बशर्ते कि संग्रह क्षेत्रों को किसी रासायनिक रसायन से उपचारित न किया गया हो। उदहारण के तौर पर कई उत्पाद जैसे कि अनारदाना, अखरोट आदि हमारे देश में ऐसे स्रोतों से ही संग्रहित किए जाते हैं।

भारत में वर्तमान स्थिति

जैविक प्रमाणीकरण प्रक्रिया (ऑर्गेनिक उत्पादन के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रम के तहत पंजीकृत) के तहत जैविक उत्पादन का कुल क्षेत्रफल 3.56 मिलियन हेक्टेयर (2017–18) है। इसमें 1.78 मिलियन हेक्टेयर (50 प्रतिशत) खेती–योग्य क्षेत्र और दूसरा 1.78 मिलियन हेक्टेयर (50 प्रतिशत) जंगली फसल संग्रह हेतु शामिल है। सभी राज्यों में, मध्य प्रदेश ने राजस्थान, महाराष्ट्र और उत्तर प्रदेश के बाद जैविक प्रमाणीकरण के तहत सबसे बड़ा क्षेत्र शामिल किया है। वर्ष 2016 के दौरान, सिक्किम ने जैविक प्रमाणीकरण के तहत अपनी पूरी खेती योग्य भूमि (76,000 हेक्टेयर से अधिक) को परिवर्तित करने का उल्लेखनीय गौरव हासिल किया है। भारत ने प्रमाणित जैविक उत्पादों का लगभग 1.70 मिलियन मीट्रिक टन (2017–18) उत्पादन किया था। वर्ष 2017–18 के दौरान जैविक उत्पाद के निर्यात की कुल मात्रा 4.58 लाख मीट्रिक टन थी जिसकी कीमत लगभग 3453.48 करोड़ (515.44 मिलियन अमरीकी डालर) थी। भारत से जैविक उत्पादों का निर्यात संयुक्त राज्य अमेरिका, यूरोपीय संघ, कनाडा, स्विटज़रलैंड, ऑस्ट्रेलिया, इज़राइल, दक्षिण कोरिया, वियतनाम, न्यूज़ीलैंड, जापान आदि देशों में किया जाता है। निर्यात किए जाने वाले उत्पादों में आम, केला, काजू, अनानास, पैशनफल, अखरोट, चाय, कॉफी, आदि शामिल हैं। विश्व की जैविक कृषि भूमि के मामले में भारत का रैंक 9वां है और कुल उत्पादकों की संख्या 2018 के आंकड़ों के अनुसार पहली है (स्रोतः एफआईबीएल और आईएफओएएम ईयर बुक 2018)।

भारत से जैविक निर्यात के लिए संस्थागत समर्थन का सृजन कृषि और प्रसंस्कृत खाद्य निर्यात विकास प्राधिकरण (APEDA), वाणिज्य मंत्रालय द्वारा जैविक उत्पादन के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रम (NPOP) के शुभारंभ के तहत किया गया था। एनपीओपी प्रोत्साहन पहल, निरीक्षण और प्रमाणन एजेंसियों द्वारा मान्यता का समर्थन करता है, और निर्यात की सुविधा के लिए कृषि–व्यवसाय उद्यमों को समर्थन प्रदान करता है। भारत में उत्पादकों के प्रमाणीकरण की सुविधा के लिए अब 26 मान्यता–प्राप्त प्रमाणन एजेंसियां हैं। राष्ट्रीय कार्यक्रम में प्रमाणन निकायों के लिए मान्यता कार्यक्रम, जैविक उत्पादन के लिए मानक, जैविक खेती को बढ़ावा देना आदि शामिल हैं। उत्पादन और मान्यता प्रणाली के लिए एनपीओपी मानकों को यूरोपीय आयोग और स्विट्ज़रलैंड द्वारा असंसाधित पादप उत्पादों के लिए उनके देश के मानकों के बराबर मान्यता दी गई है। इसी प्रकार, यूएसडीए ने मान्यता के अनुसार एनपीओपी अनुरूपता मूल्यांकन प्रक्रियाओं को अमेरिका के समकक्ष माना है। इन मान्यताओं के साथ, भारतीय जैविक उत्पादों को भारत के मान्यता–प्राप्त प्रमाणन निकायों द्वारा विधिवत प्रमाणित किया जाता है, जोकि आयात करने वाले देशों द्वारा स्वीकार किए जाते हैं। संस्थागत सहायता प्रदान करने और उपयुक्त रसद प्रदान करके किसानों को जैविक फसल उत्पादन में सुविधा प्रदान करने के लिए गाजियाबाद में कृषि मंत्रालय के तहत जैविक खेती के लिए केंद्र की स्थापना की गई थी। भारत के कृषि और सहकारिता विभाग द्वारा शुरू किया गया राष्ट्रीय बागवानी मिशन, बागवानी फसलों की जैविक खेती के लिए किसानों को सहायता प्रदान करता है। इन हस्तक्षेपों के परिणामस्वरूप, जैविक कृषि में अप्रत्याशित रूप से उच्च वृद्धि देखी गई है।

भारत में जैविक खाद्य उपभोग का पैटर्न विकसित देशों की

तुलना में बहुत अलग है। भारत में, उपभोक्ता जैविक उत्पादों को प्राथमिकता देते हैं। हालांकि, ऐसे कई उपभोक्ता हैं जो प्राकृतिक और जैविक उत्पादों के बीच के अंतर से अंजान हैं। कई लोग "प्राकृतिक" लेबल वाले उत्पादों को यह सोचकर खरीदते हैं कि वे जैविक हैं। हालांकि, उपभोक्ताओं को प्रमाणन प्रणाली के बारे में पता नहीं है, क्योंकि भारत में घरेलू खुदरा बाज़ार के लिए प्रमाणीकरण अनिवार्य नहीं है।

जैविक फल उत्पादन

जगह, फसल और किस्म चयन

जैविक फलों को सफलतापूर्वक पैदा करने के लिए स्थानीय पर्यावरणीय कारकों को ध्यान में रखना बहुत महत्वपूर्ण है। प्रस्तावित स्थान को ध्यान से देखें और इसकी मिट्टी, ढलान, और पहलू, जल रिसाव–स्तर और जल निकासी, पाले का प्रकोप, अधिकतम और न्यूनतम तापमान, बढ़वार हेतु मौसम की लंबाई, हवा और हवा परिसंचरण पैटर्न, वार्षिक वर्षा का वितरण, सिंचाई के लिए पानी की उपलब्धता एवं पानी की निकटता आदि को ध्यान में रखना अति–आवश्यक है। इनमें से अधिकांश मानव नियंत्रण से परे हैं, अतः रोपण योजना स्थान की प्राकृतिक स्थितियों के अनुरूप होनी चाहिए। किसान समय के साथ मिट्टी को सुधारने में सक्षम हो सकते हैं, तथा तापमान को किसी भी महत्वपूर्ण सीमा तक संशोधित कर सकते हैं। जैविक फल उत्पादन का अर्थशास्त्र काफी हद तक सही स्थान के चुनाव पर निर्भर है। चूंकि जैविक फल उत्पादन में रोग और कीटों को नियंत्रित करने के लिए रसायनों का बहुत सीमित उपयोग करना संभव है, इसलिए पौधे की सुरक्षा के लिए निवारक उपाय के रूप में सही स्थान के चुनाव का विकल्प महत्वपूर्ण है। समशीतोष्ण फल उत्पादन में कुछ ठंड की चोट के प्रति अधिक संवेदनशील होते हैं। इन स्थानों से बचा जाना चाहिए; निचले स्थानों पर ढलान की तुलना में ठंड का अधिक खतरा होता है। एक अंगूठे के नियम के रूप में, दक्षिण की ओर ढलान कार्बनिक समशीतोष्ण फल उत्पादन के लिए अनुकूल है। कम ऊंचाई वाले

तालिका–1 कार्बनिक पोषक तत्वों और मिट्टी प्रबंधन के स्रोत

क्षेत्र संसाधन स्रोत	
फसल चक्रीकरण	फसल को अतिरिक्त पोषक तत्व प्रदान करते हैं, मिट्टी के कार्बनिक पदार्थों को बढ़ाते हैं और बाग जैव विविधता में सुधार करते हैं।
अन्तः शस्यन	लेग्यूम्स (क्लोवर या ल्यूसर्न) – मिट्टी के नाइट्रोजन के 40–140 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रतिवर्ष जोड़ने में सक्षम।
गोबर की खाद	जानवरों के गोबर और मूत्र का विघटित मिश्रण; इसमें 0.5 प्रतिशत नाइट्रोजन, 0.2 प्रतिशत फॉस्फोरस और 0.5 प्रतिशत पोटाश होता है।
मुर्गी खाद	इसमें 3.03 प्रतिशत नाइट्रोजन; 2.63 प्रतिशत फॉस्फोरस और 1.4 प्रतिशत पोटाश होता है।
कूड़ा खाद	फसल अवशेषों और अन्य कार्बनिक पदार्थों का मिश्रण जो कार्बनः नाइट्रोजन के अनुपात को 10ः 1 और 15ः 1 के बीच ले आता है।
वर्मी कम्पोस्ट	केंचुओं द्वारा निर्मित जैविक खाद। इसमें 0.4–0.66 प्रतिशत नाइट्रोजन, 1.16–1.93 प्रतिशत फॉस्फोरस और 0.26 से 0.42 प्रतिशत पोटाश शामिल है। इसमें सूक्ष्म पोषक तत्व भी होते हैं।
हरी खाद	हरी खाद को विशेष रूप से मिट्टी में उगाया जाता है ताकि मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ और पोषक तत्वों का निर्माण किया जा सके; हरी खाद फसलों द्वारा 60–280 किलोग्राम नाइट्रोजन/ हेक्टेयर मृदा में बढ़ाया जा सकता है।
स्थाई सोड	बागों में पसंद किया जाता है जो अच्छी मिट्टी की संरचना को बनाए रखने में मदद करता है।
गैर–क्षेत्र संसाधन स्रोत	
प्रेस मड	चीनी उद्योग का उत्पाद है जो क्षारीय मिट्टी के लिए उपयुक्त होता है।
पारंपरिक उत्पाद	पंचगव्य, दासवाक्य आदि कई कार्बनिक उत्पादों के मिश्रण को किण्वन द्वारा तैयार किया जाता है।
जैव उर्वरक	नाइट्रोजन फिक्सर– राइजोबियम– (50–100 किग्रा/ हे.), एज़ोटोबैक्टर (15–20 कि.ग्रा /हे.), एज़ोस्पिरिलम, ब्लू ग्रीन शैवाल फॉस्फेट सॉल्यूबलाइजिंग माइक्रोब्स– बैक्टीरियल (PSB) (स्यूडोमोनॉड्स एंड बैसिली) और कवक (PSF) स्ट्रेन (एस्परगिलि और पेनिसिलियम) वेम कवक पादप विकास को बढ़ावा देने हेतु राइजोबैक्टीरिया–राइजोबियम, एज़ोटोबैक्टीरिया, एज़ोस्पिरलम
रॉक मिनरल	प्राकृतिक जिप्सम, मैग्नीशियम रॉक, पलवेराइज़्ड रॉक, रॉक फॉस्फेट डोलोमाइट, चूना पत्थर और रॉक डस्ट
रक्त मील/अस्थि मील	10–12 प्रतिशत उपलब्ध नाइट्रोजन, 1 –1.5 प्रतिशत फॉस्फोरस और 1.0 प्रतिशत पोटेशियम पाया जाता है।
खली	कीट विकर्षक और नाइट्रीकरण अवरोधक (नीम केक, पोंगामिया केक) का कार्य करते हैं।

फल वृक्षों के लिए अधिक प्रकाशयुक्त स्थान का चयन करना चाहिए।

कीटनाशक और भारी धातु संदूषण के लिए चयनित स्थान की मिट्टी का परीक्षण करना महत्वपूर्ण है क्योंकि इनका अत्यधिक–स्तर अंतिम उत्पाद के जैविक उत्पाद के रूप में प्रमाणीकरण में अवरोध पैदा करता है। उदाहरण के लिए, आर्द्र जलवायु परिस्थितियों में अधिक रोगों की वजह से आर्गेनिक फलों का उत्पादन बहुत जटिल होता है। जैविक उत्पादकों के लिए सबसे महत्वपूर्ण नियंत्रण उपाय सांकुर एवं मूलवृंत का चयन करना है जो कीटों और रोगों के लिए प्रतिरोधी हो, तथा विशेष रूप से प्रस्तावित क्षेत्रों में सबसे अधिक प्रचलित हो। उदाहरण के लिए फायटोफ्योरा प्रतिरोधी अंगूर मूलवृंत, ऊनी एफिड प्रतिरोधी सेब मूलवृंत, फ्यातोफ्थोरा प्रतिरोधी साइट्रस मूलवृंत और नेमाटोड–प्रतिरोधी पीच मूलवृंत। रोग नियंत्रण के लिए अच्छी जल निकासी और वायु परिसंचरण आवश्यक है। कुछ खरपतवारों और चारा प्रजातियों की उपस्थिति जैविक उत्पादकों के लिए विशेष चिंता का विषय होता है।

मृदा प्रबंधन

रोपण से पहले मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ाना और खरपतवार की समस्या (विशेषकर बारहमासी खरपतवार) को नियंत्रित करना महत्वपूर्ण है। खरपतवार नियंत्रण, बाग स्थापना से पहले करना आसान होता है, क्योंकि फल उत्पादन में खरपतवारनाशी प्रयोग की अनुमति नहीं है। स्थान की तैयारी में मिट्टी के संघनन को कम करना, उर्वरता को बढ़ाना, मिट्टी के पीएच को समायोजित करना और खरपतवारों, कीटों और रोगों का प्रबंधन करना अत्यंत महत्वपूर्ण है। एक संतुलित पोषणयुक्त मिट्टी, उचित पीएच मान, और भरपूर मात्रा में कार्बनिक पदार्थ फलों के लिए जैविक प्रबंधन योजना के मूल तत्व हैं।

रोपण से पहले पोषक तत्वों की कमी या संरचनात्मक समस्याओं की जांच के लिए मिट्टी और पत्ती परीक्षणों का उपयोग अवश्य करें। मानकों के तहत कई कार्बनिक संशोधन की अनुमति है, लेकिन उनका उपयोग दर्ज किया जाना चाहिए। परंपरागत रूप से, पीएच को चूने (पीएच को बढ़ाने के लिए) या सल्फर (पीएच को कम करने) के अनुप्रयोगों के माध्यम से समायोजित किया जा सकता है। अधिकांश फल पौधे पीएच 6.5–7.0 के आसपास सबसे अच्छी तरह फलते हैं। मृदा परीक्षण के परिणाम मृदा संशोधन के अनुप्रयोगों जैसे खाद, चूना, जिप्सम, या अन्य रॉक पाउडर के बारे में उत्पादकों का मार्गदर्शन करते हैं, ताकि मृदा को अच्छी पोषण–युक्त स्थिति प्रदान की जा सके।

सामान्य तौर पर फलों की फसलों को अच्छे उत्पादन के लिए अत्यधिक उपजाऊ मिट्टी की आवश्यकता नहीं होती है, हालांकि यह फल प्रजातियों के साथ भिन्न होती है। अत्यधिक उपजाऊ मिट्टी, नाइट्रोजन से भरपूर, पेड़ों में फलने के बजाय बहुत अधिक वनस्पति विकास को बढ़ावा देती है। जैविक फलों के रोपण के लिए रोपण से पूर्व पौधे की मिट्टी में सुधार के लिए आमतौर पर कवर क्रॉपिंग और खाद, प्राकृतिक खनिजों या अन्य जैविक उर्वरकों के अनुप्रयोगों के कुछ संयोजन शामिल होते हैं। मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों को बढ़ाने के लिए रोपण से पहले हरी खाद की फसलों को मिट्टी में जोतकर मिला देना चाहिए।

यदि वहां पुनःरोपण की समस्या है, तो कुछ वर्षों के लिए स्थान को हरे परती के रूप में छोड़ देना चाहिए। अधिकांश निरोधात्मक पदार्थों को मिट्टी के मजबूत जैविक सक्रियण द्वारा समाप्त किया जाता है। ऐसा करने से मिट्टी की संरचना में सुधार होता है और मिट्टी को नाइट्रोजन और कार्बनिक पदार्थों से समृद्ध किया जाता है।

खरपतवार जैसे बरमूदा घास, जॉनसन घास, क्वैक घास, और कई अन्य खतरनाक प्रजातियां फल उत्पादकों के लिए गंभीर समस्या हो सकती हैं जिन्हें बाग स्थापित होने के बाद जैविक तरीकों से नियंत्रित करना मुश्किल होता है, जबकि इन्हें बाग स्थापित होने से पहले नियंत्रित करना आसान रहता है। कवर फसलें खरपतवार नियंत्रण में सहायक होती हैं। जुताई के एक सुनियोजित अनुक्रम के साथ कवर क्रॉपिंग एक खरपतवार नियंत्रण की प्रभावी रणनीति है जो मिट्टी की उर्वरता और स्थिर ह्यूमस में भी योगदान देती है। सेसबानिया सबसे अधिक बायोमास का उत्पादन करने की वजह से सबसे प्रभावी खरपतवार दमनकारी माना जाता है। फूल आने पर काटे जाने पर यह पुनः अच्छी तरह से उग आता है और खरपतवारों को पनपने नहीं देता है। यह बहुत सूखा–सहिष्णु है। सनई भी एक बेहतर नाइट्रोजन उत्पादक है, लेकिन सेसबानिया की तुलना में कम प्रभावी खरपतवारनाशक है।

मृदा सौरकरण एक उपयोगी मृदा कीटाणुशोधन विधि है। एक तापमान और गहराई तक मिट्टी को गर्म करने के लिए सौरकरण में 4–8 सप्ताह लगते हैं जो मिट्टी में हानिकारक कवक, जीवाणु, सूत्रकृमि, खरपतवार और कीड़ों को नष्ट कर देता है। पंक्तियों और रोपण प्रणालियों की दिशा को नियोजित किया जाना चाहिए तथा बागरोपण से 2–3 वर्ष पहले वायुरोधी पेड़ों को स्थापित करना अति आवश्यक है। लीची के नए बाग लगने से पहले पुरानी लीची के बाग से हर गड्ढे में एक टोकरी मिट्टी को मिश्रित करना चाहिए, जिसमें माइकोराइज़ल कवक होता है। यह नए लगाए गए पौधों की स्थापना और त्वरित विकास में सहायक होता है।

बाग प्रबंधन

बागों में पंक्ति के बीच स्थान खाली रखने से भूक्षरण होता है, अतः कार्बनिक पदार्थों की क्रमिक कमी एवं मिट्टी के संघनन में वृद्धि होती है जिससे मृदा में पानी के रिसाव में कमी आती है। बाग तल प्रबंधन कटाव को नियंत्रित कर सकता है, मिट्टी में सुधार कर सकता है, और लाभकारी कीट को आश्रय देता है। एक प्रणाली जो पूर्ण ग्राउंड कवर प्रदान करती है, कटाव के खिलाफ सबसे अच्छी सुरक्षा प्रदान करती है। जड़ी–बूटियां, फलियां और घास एक स्थाई मिश्रित सोड प्रदान करती है। आरंभ में फलों के पेड़ों या बेलों की पंक्तियों के बीच सब्जियों आदि के साथ अंतर–फसल

लगाना लाभप्रद होता है। इस बात का ध्यान रहे कि अंतर–फसल मुख्य फसल के लिए विभिन्न कीटों को आश्रय न दे और यह पोषक तत्वों और पानी के लिए मुख्य फसल के साथ प्रतिस्पर्धा भी न करे।

जैविक फलों के उत्पादन में, मशीनरी का उपयोग करने के लिए विशेष रूप से ध्यान रखा जाना चाहिए ताकि मिट्टी को नुकसान न पहुंचे। मिट्टी में बड़े छिद्र, वातन और जल भंडारण के लिए जिम्मेदार होते हैं और मिट्टी के जीवों के आवास के रूप में भी काम करते हैं। यह मुख्य रूप से बड़े छिद्र हैं जो मिट्टी पर दबाव से आकार में कम हो जाते हैं। इस तरह से मिट्टी के संरक्षण के लिए मशीनरी के उपयोग की योजना बनाते समय संघनन को रोकना महत्वपूर्ण है।

मिट्टी की उर्वरता को बनाए रखने के लिए फलीदार पौधों की खेती और हरी खादों के उपयोग के साथ–साथ, वर्ष में कई बार फसल चक्रण (रोटेशन) करना चाहिए। जैविक खेतों में बायो–डिग्रेडेबल पदार्थ एवं पौधे या जानवरों द्वारा उत्पादित पदार्थ की पर्याप्त मात्रा पोषक तत्व प्रबंधन कार्यक्रम का आधार होती है। मृदा–प्रबंधन में पोषक तत्वों के ह्रास को कम करना अति आवश्यक है। भारी धातुओं और अन्य प्रदूषकों के संचय को रोका जाना अत्यंत जरूरी है।

तालिका–2 जैविक खेती में पोषण और मिट्टी कंडीशनिंग में उपयोग किए जाने वाले उत्पादों के लिए शर्त

अनुमति प्राप्त	एफवाईएम, घोल और गोमूत्र, हरी खाद, पलवार, कैल्शियम क्लोराइड, जिप्सम, क्ले, जैव उर्वरक, पीट, वर्मीकुलाइट आदि।
सीमित	रक्त मील, अस्थि मील, मुर्गी खाद, एसओपी, रॉक फॉस्फेट, हड्डी मील, खाद आदि।
निषिद्ध	मानव मल, खनिज एवं उर्वरक, (सुपरफॉस्फेट), उर्वरक जिसमें क्लोराइड, क्विकलाइम, हाइड्रेटेड चूना, सीवेज कीचड़ और सीवेज कीचड़ खाद आदि।

तालिका–3 जैविक खेती में पादप सुरक्षा में उपयोग किए जाने वाले उत्पादों के लिए शर्त

अनुमति प्राप्त	नीम उत्पाद, जिलेटिन, लहसुन और पोंगामिया का अर्क; बायोकंट्रोल एजेंट; नरम साबुन (पोटेशियम साबुन); होम्योपैथिक और आयुर्वेदिक उत्पाद; जाल और फेरोमोन
सीमित	नीम का तेल, रोटेनन, पाइरेथ्रिन, परजीवी व कीटों के शिकारियों को प्रोत्साहन, एस्परगिलस, प्राकृतिक एसिड (सिरका) उत्पाद, हल्के खनिज तेल, पोटेशियम परमैंगनेट, सोडियम बाइकार्बोनेट, सल्फर
निषिद्ध	एथिल अएल्कोहोल और अन्य कृत्रिम कीटनाशक; आनुवंशिक रूप से इंजीनियर जीवों या उत्पादों का उपयोग

खाद की दर निर्धारित करने के लिए और खाद के प्रत्येक बैच का परीक्षण करना उचित रहता है। परीक्षण में एंटीबायोटिक्स और भारी धातुओं जैसे विषाक्त तत्वों की यदि उपस्थिति है तो उनका उपयोग रोक दें क्योंकि इन्हें कार्बनिक मानकों के तहत प्रयोग करने की अनुमति नहीं है। इसके अलावा, जैविक खाद का अधिक उपयोग भी फसल के लिए हानिकारक है। अतिरिक्त नाइट्रेट जलमार्ग को प्रदूषित कर सकते हैं, युवा पेड़ों की जड़ों को नुकसान पहुंचा सकते हैं और फल की गुणवत्ता को प्रभावित कर सकते हैं। उदाहरण के लिए, अंगूर में नाइट्रोजन की अधिक आपूर्ति फल की गुणवत्ता को प्रभावित करती है तथा अधिक वृद्धि से वायु परिसंचरण कम हो जाता है जो रोगों को बढ़ावा देता है। इसलिए, मिट्टी की पोषक स्थिति की निगरानी करने और ऐसी समस्याओं से बचने के लिए नियमित मिट्टी विश्लेषण आवश्यक है। सेब और लीची के पेड़ों की जड़ों में माइकोराइजल कवक के संक्रमण से फॉस्फोरस की उपलब्धता को बढ़ाया जा सकता है। कार्बनिक पोषण तत्वों के स्रोत तथा उनके उपयोग की शर्तें तालिका 1–2 में दी गई हैं।

जैविक खेती में एक प्रमुख उद्देश्य खरपतवारों के संयोजन को बदलना है, ताकि बाग को अधिकतम लाभ मिल सके। पलवार का प्रयोग मृदा में नमी को बनाए करने के साथ खरपतवार नियंत्रण करता है और मिट्टी में जैविक गतिविधियों को बेहतर बनाता है। अकार्बनिक और जैविक सामग्री का उपयोग पलवार के लिए किया जा सकता है।

बाग में जानवरों की चराई खरपतवार नियंत्रण में सहायक होती है, हालांकि, विशेष रूप से सूखे के दौरान देखभाल की जानी चाहिए, जब पशुधन पेड़ों या लताओं को खा सकते हैं। यांत्रिक विधियों में स्लैशिंग (घास काटना, ब्रश काटना), थर्मल निराई (गर्म हवा, गर्म पानी या लौ) आदि शामिल हैं। हाथ से निराई करना खरपतवार नियंत्रण का महत्वपूर्ण एवं प्रभावी तरीका होता है।

कीट और रोग प्रबंधन

कीटों और बीमारियों को कुछ हद तक कर्षण क्रियाओं द्वारा नियंत्रित किया जा सकता है। एकीकृत कीट प्रबंधन यह मानता है कि संभावित रूप से हानिकारक प्रजातियों की मात्र उपस्थिति का मतलब यह नहीं है कि नियंत्रण क्रियाएं आवश्यक हैं। एकीकृत प्रबंधन कार्यक्रमों में विकसित कीट जीवन–चक्र और निगरानी तकनीकों का ज्ञान जैविक उत्पादकों के लिए भी उपयोगी है, क्योंकि वे कार्बनिक कीट प्रबंधन मानक के कुछ तत्वों को प्रतिबिंबित करते हैं।

रोग कवक, जीवाणु, विषाणु, सूत्रकृमि मायकोप्लास्मा या प्रोटोजोआ के कारण हो सकते हैं। मौसम के कारण या पोषक तत्वों के असंतुलन (कमी या विषाक्तता) के कारण विकार ऐसे लक्षण पैदा कर सकते हैं जो बीमारियों की तरह दिखते हैं। उचित पहचान और निवारक प्रबंधन अनिवार्य है। उदाहरण के लिए, बोरान

विषाक्तता या ब्लॉसम–एंड रोट्स को कवकनाशी के साथ ठीक नहीं किया जा सकता है। एक स्थापित बाग में सफाई, रोगग्रस्त पौधों की कटाई–छंटाई तथा रोगवाहक की रोकथाम करके बीमारियों को नियंत्रित किया जा सकता है।

जैविक फल उत्पादन में, पौधों की सुरक्षा के लिए निवारक तरीकों पर जोर देना चाहिए। चूंकि जैविक उत्पादन में कीटनाशकों का प्रयोग बहुत सीमित होता है और वे अक्सर एकीकृत उत्पादन की तुलना में कम प्रभावी होते हैं। कुशल परिणामों को प्राप्त करने के लिए पौधे के संरक्षण के सभी तरीकों का सबसे अच्छा संभव उपयोग किया जाना चाहिए। एक ही फसल के साथ पुराने बागों की जगहों पर पुनरावृत्ति से बचा जाना चाहिए। पूरे बाग की मिट्टी की सफाई, गिरे हुए फलों को हटाकर नष्ट कर दें तथा कीटों के छिपने के स्थानों को उपचारित करें।

प्रजातियों की विविधता में बदलाव मुख्य फसल के प्रतिस्पर्धी लाभ को बढ़ाने का एक प्रभावी तरीका है। इसमें शामिल हैः पौधों की प्रजातियों की संख्या में वृद्धि करना जो कीट के लिए बाधा के रूप में कार्य करते हैं, या एक वैकल्पिक पसंदीदा होस्ट प्रदान करते हैं (उदाहरण के लिए ट्रैप क्रॉप)। बाग की सीमा में और ज़मीनी कवर में वांछनीय पौधों के मिश्रण को बनाए रखना शिकारियों (मित्र कीटों) को प्रोत्साहित करता है। कुछ पौधे कुछ कीटों के शिकारियों को आकर्षित करते हैं जैसे कि गाजर और पार्सनिप, सेब के कोडिंग मोथ को नियंत्रित करने के लिए परजीवी ततैया को आकर्षित करते हैं।

प्रमाणित जैविक उत्पादन के लिए अनुमोदित कीटनाशक आमतौर पर प्राकृतिक स्रोतों से प्राप्त होते हैं, जो तेजी से विघटित होते हैं और पर्यावरण पर कम से कम प्रभाव डालते हैं। पौधों से विषैले यौगिकों को निकालकर वानस्पतिक कीटनाशक तैयार किए जाते हैं। विशेष रूप से तैयार किए गए साबुन जिनमें वसीय अम्लों की मात्रा काफी अधिक होती है, एफिड्स, व्हाइट फ्लाइज, लीफहॉपर्स और स्पाइडर माइट्स सहित कई कीटों के खिलाफ प्रभावी होते हैं। पादप सुरक्षा में उपयोग किए जाने वाले उत्पाद एवं शर्तें तालिका–3 में दी गई है।

संभावनाएं एवं भावी चुनौतियां की विविधता

भारत कृषि जलवायु क्षेत्रों की विविधता के कारण सभी प्रकार के जैविक उत्पादों का उत्पादन करने में सक्षम है। देश के कई हिस्सों में, जैविक खेती की परंपरा विरासत में मिली है। यह जैविक उत्पादकों के लिए घरेलू और निर्यात बाजार में लगातार बढ़ रहे बाजार का दोहन करने में सहायक है। भारत दुनिया के अग्रणी फल उत्पादकों में से एक है। उत्पादन का अधिकांश भाग ताजे और घरेलू उपयोग में किया जाता है। इंग्लैंड, नीदरलैंड और जर्मनी में जैविक आमों की अत्यधिक मांग है, जिसका भारत द्वारा दोहन किया जा सकता है। भारतीय जैविक केले का निर्यात विश्व व्यापार के संबंध में न के बराबर है। भारत में जैविक अनानास के निर्यात की अच्छी संभावना है, क्योंकि इसके लिए तीन प्रमुख निर्यात बाजार अमेरिका, यूरोपीय संघ और जापान हैं। भारतीय अंगूर के लिए मुख्य निर्यात गंतव्य मध्य–पूर्व देश है, लेकिन यह जैविक अंगूर के लिए सीमित अवसर प्रदान करता है। भारतीय जैविक अंगूर के लिए यूरोपीय संघ, विशेष रूप से इंग्लैंड और नीदरलैंड मुख्य बाज़ार हैं। अन्य जैविक फल, जो सफलतापूर्वक निर्यात किए जा सकते हैं, उनमें लीची, पैशनफल, अनार, चीकू, सेब, अखरोट और स्ट्रॉबेरी शामिल हैं।

हालांकि बढ़ती मांग के कारण जैविक फल उत्पादकों के लिए भविष्य के अवसर उज्ज्वल दिख रहे हैं, लेकिन चुनौतियां हमेशा रहेंगी। नए कीट अपनी सीमा में लगातार वृद्धि करते रहते हैं। फलों की खेती को विकसित करने के लिए और अधिक प्रयासों की आवश्यकता है जो इनपुट पर निर्भरता को कम करने के लिए विशिष्ट क्षेत्रों में जैविक उत्पादन समस्याओं का समाधान करते हैं। यह एक महंगी और दीर्घकालिक प्रक्रिया है लेकिन कई देशों में चल रही है। प्रभावी खरपतवार नियंत्रण उपायों की व्यापक रूप से आवश्यकता होती है। आज तक जैविक तरीके व्यावहारिक साबित नहीं हुए हैं, और जुताई पर निर्भरता मिट्टी की स्थिति को नकारात्मक रूप से प्रभावित कर सकती है। जबकि जैविक फलों की बिक्री में वृद्धि जारी है, जैविक और "पारंपरिक" फलों के उत्पादन के बीच का अंतर कुछ क्षेत्रों में कम हो रहा है और भविष्य में उपभोक्ता की धारणा को बदल सकता है और जैविक कीमतों को कम कर सकता है।

(डॉ. राधामोहन शर्मा और डॉ. अनिल कुमार दुबे भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली के फल एवं उद्यानिकी प्रौद्योगिकी संभाग में प्रधान वैज्ञानिक और नरेंद्र सिंह शोध छात्र हैं।)

ई–मेल : rmsharma345@gmail.com

सब्जियों की जैविक खेती

–डॉ. प्रवीण कुमार सिंह

सब्जियों की बढ़ती मांग और जैविक संसाधनों की अल्प–उपलब्धता के कारण भारत में शुद्ध जैविक खेती संभव नहीं है; बल्कि कुछ विशिष्ट क्षेत्रों की उच्च गुणवत्ता वाली सब्जी फसलों को निर्यात के लिए जैविक खेती में परिवर्तित किया जा सकता है। इस प्रकार, एक संपूर्ण भारतीय स्थिति में, वर्तमान में निर्यात–उन्मुख सब्जी फसलों को जैविक खेती की ओर प्रवृत्त करना केवल आंशिक रूप से ही संभव है।

दुनिया भर में तेजी से फैल रही शहरी कृषि उत्पादन प्रणालियों में खाद्य सुरक्षा और पर्यावरण प्रदूषण के बारे में चिंता बढ़ रही है। जैविक उत्पादों की मांग, विशेष रूप से विकसित देशों में बढ़ रही है। विश्व–स्तर पर, 162 देशों में जैविक कृषि की जाती है और 3.7 करोड़ हेक्टेयर भूमि का प्रबंधन 18 लाख फार्म परिवारों द्वारा किया जाता है।

खाद्य पदार्थों की सुरक्षा और गुणवत्ता के बारे में बढ़ती जागरुकता, प्रणाली की दीर्घकालिक स्थिरता और समान रूप से उत्पादक होने के सबूतों को जमा करने के बाद जैविक खेती एक विकल्प के रूप में उभरी है। खेती की प्रणाली जो न केवल गुणवत्ता और स्थिरता की चिंताओं को संबोधित करती है, बल्कि एक लाभदायक आजीविका विकल्प भी सुनिश्चित करती है। भारत में विकसित देशों और प्रमुख शहरी केंद्रों द्वारा जैविक उत्पाद तेजी से पसंद किए जा रहे हैं। भारतीय जैविक उत्पादों खासकर चाय, कॉफी, कपास आदि की भारी मांग अंतरराष्ट्रीय बाजार में मौजूद है। घरेलू बाजार में उपभोक्ताओं का एक विशेष वर्ग भी उभर रहा है, जिन्हें गुणवत्तापूर्ण भोजन की आवश्यकता होती है। वर्ष 2013–14 के दौरान वैश्विक व्यापार 60 बिलियन अमरीकी डालर (60,000 करोड़ रुपये) था और अगले पांच वर्षों के भीतर 100 बिलियन अमरीकी डालर (6,00,000 करोड़ रुपये) को छू सकता है। भारत में यह व्यापार 5000–6000 करोड़ रुपये तक पहुंच सकता है जोकि वैश्विक व्यापार का लगभग एक प्रतिशत है।

इंटरनेशनल सेंटर फॉर ऑर्गेनिक एग्रीकल्चर (ICCOA) ने अनुमान लगाया कि वर्ष 2011–12 में जैविक उत्पादों के लिए घरेलू बाजार रु.300 करोड़ था और 2012–13 में बढ़कर रु. 600 करोड़ हो गया यानी 100 प्रतिशत की विकास दर। जैविक कृषि निर्यात बाजार भारत में जैविक कृषि के प्रमुख उत्प्रेरकों में से एक है। भारत 31 जैविक उत्पादों का निर्यात करता है। अनुमान है कि उत्तर प्रदेश और मध्य प्रदेश की जंगली जड़ी–बूटियों को छोड़कर कुल जैविक उत्पादन के 85 प्रतिशत से अधिक का निर्यात किया जाता है। भारत को ऑर्गेनिक चाय के एक निर्यातक के रूप में जाना जाता है और कई अन्य उत्पादों के लिए भी बहुत अधिक निर्यात क्षमता

है। अन्य जैविक उत्पाद जिनके लिए भारत में आला बाजार हैं– वे मसाले और फल हैं। जैविक चावल, सब्जी, कॉफी, काजू, तेल, गेहूं और दालों के लिए भी अच्छी प्रतिक्रिया है।

जैविक खेती से प्रणाली की स्थिरता और पर्यावरण संवेदनशीलता, दोनों उद्देश्य जुड़े हैं। इन दोनों लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए, कुछ नियमों और मानकों को विकसित किया गया है जिनका सख्ती से पालन करना चाहिए। इसमें बदलाव और लचीलेपन की बहुत कम गुंजाइश है। इस प्रकार, जैविक खेती को उपलब्ध विकल्पों के सर्वोत्तम उपयोग की आवश्यकता नहीं होती है, बल्कि उन विकल्पों का सबसे अच्छा उपयोग होता है जिन्हें अनुमोदित किया गया है। ये विकल्प आमतौर पर पारंपरिक प्रणाली की तुलना में अधिक जटिल और कम प्रभावी होते हैं। सब्जियों की बढ़ती आवश्यकताओं और जैविक संसाधनों की अल्प–उपलब्धता के कारण भारत में शुद्ध जैविक खेती संभव नहीं है; बल्कि कुछ विशिष्ट क्षेत्र को उच्च गुणवत्ता वाली सब्जी फसलों के निर्यात के लिए जैविक खेती में परिवर्तित किया जा सकता है। इस प्रकार, एक संपूर्ण भारतीय स्थिति के रूप में, हाल के दिनों में निर्यात–उन्मुख सब्जी फसलों की जैविक खेती के लिए केवल आंशिक स्विचिंग संभव है। इस संदर्भ में, नोबेल पुरस्कार विजेता डॉ नॉर्मन बोरलॉग (2002) को उद्धृत करना प्रासंगिक होगा जिन्होंने कहा था कि 'खाद्य उत्पादन को जैविक पर परिवर्तित करने से फसल की पैदावार कम होगी। हम उन सभी ऑर्गेनिक का उपयोग कर सकते हैं जो उपलब्ध हैं लेकिन हम छह बिलियन लोगों को जैविक उर्वरकों के साथ खिलाने नहीं जा रहे हैं।

भारतीय कृषि के लिए, रासायनिक उर्वरकों के उपयोग को पूरी तरह से समाप्त नहीं किया जा सकता है, बल्कि कम किया जा सकता है, या कम से कम किया जा सकता है। विभिन्न प्रयोगों द्वारा यह साबित हो चुका है कि विभिन्न कार्बनिक स्रोतों के साथ अकार्बनिक उर्वरकों का अनुप्रयोग उच्च फसल उत्पादकता बनाए रखने, मिट्टी की गुणवत्ता और मिट्टी की उत्पादकता में सुधार करने में सक्षम हैं, एन+ए+पी और के की आपूर्ति के अलावा, ये कार्बनिक स्रोत, द्वितीयक और सूक्ष्म पोषक तत्वों की कमियों की बढ़ती घटना को भी कम करने में मदद करते हैं। वाणिज्यिक खनिज उर्वरकों को बढ़ती आबादी की खाद्य आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए पोषक तत्वों को पूरा करने हेतु फसल पोषक तत्वों की आपूर्ति के मुख्य बोझ को सहन करना होगा। इसलिए, इन कार्बनिक संसाधनों का उपयोग रासायनिक उर्वरकों के साथ समन्वित एकीकरण में किया जाना चाहिए ताकि खेत में पोषक तत्वों को डालने एवं फसलों द्वारा पोषक तत्वों के ह्रास के बीच की दूरी को कम किया जा सके, साथ–साथ मिट्टी की गुणवत्ता को बनाए रखा जा सके और उच्च फसल उत्पादकता को प्राप्त किया जा सके।

विटामिन और खनिजों से भरपूर सब्जियों की फसल

पोषक तत्व	सब्जियां
विटामिन ए	गाजर, चुकंदर का पत्ता (पालक), करी पत्ता, धनिया पत्ती, केल
विटामिन बी	मटर मिर्च, लहसुन, धनिया पत्ती
विटामिन सी	शिमला मिर्च, पत्तागोभी, करेला, ऐमारैंथ, चुकंदर का पत्ता, कस्तूरी, टमाटर
कैल्शियम	अमरंथ (चौलाई), चुकंदर का पत्ता, मेथी के पत्ते, प्याज, ब्रोकोली, केल
आयरन	अमरंथ (चौलाई), चुकंदर का पत्ता, मेथी के पत्ते
आयोडीन	भिंडी, प्याज, शतावरी

जैविक खेती की मूल अवधारणा

- यह मिट्टी की जैविक उर्वरता के निर्माण पर ध्यान केंद्रित करती है। फसलों को पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है जो उन्हें स्थिर कारोबार से चाहिए। इस तरह से उत्पादित मिट्टी पोषक तत्वों के साथ पौधों की आवश्यकताओं के साथ जारी होती है।
- कीटों, बीमारियों और खरपतवारों की नियंत्रण प्रणाली के भीतर एक पारिस्थितिकी संतुलन के विकास और जैव–कीटनाशकों और विभिन्न कृषि तकनीकों जैसे फसल रोटेशन, मिश्रित फसल और खेती के उपयोग से प्राप्त होता है।
- जैविक किसान एक खेत के भीतर सभी अपशिष्टों और खादों का पुनर्चक्रण करते हैं, लेकिन खेत से उत्पादों के निर्यात से पोषक तत्वों की निरंतर निकासी होती है।
- ऐसी स्थिति में, जहां ऊर्जा और संसाधनों का संरक्षण महत्वपूर्ण माना जाता है, समुदाय या देश सभी शहरी और औद्योगिक कचरे को पुनः कृषि के लिए रिसाइकिल करने का हर संभव प्रयास करेंगे और इस तरह यह प्रणाली मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने के लिए केवल नए संसाधनों का एक छोटा–सा इनपुट होगी।

जैविक खेती की परिभाषाएं

विभिन्न स्तरों पर कई वैज्ञानिकों ने जैविक खेती की अवधारणा को विस्तार से बताया है; महत्वपूर्ण विवरण निम्नानुसार हैं– लैम्पकिन (1990) द्वारा प्रस्तुत विवरण को कार्बनिक चिकित्सा के सभी आवश्यक गुणों को कवर करने वाला सबसे व्यापक पाया गया है। लैम्पकिन के अनुसार, ऑर्गेनिक फार्मिंग एक उत्पादन प्रणाली है, जो कृत्रिम रूप से मिश्रित उर्वरकों, विकास नियामकों और पशु फीड एडिटिव्स के उपयोग से बचती है या काफी हद तक बाहर निकल जाती है। अधिकतम सीमा तक, व्यवहार्य जैविक कृषि प्रणाली फसल के सड़ने, फसल अवशेष, पशु खाद, फलियां, हरी खाद, जैविक कचरे और जैविक कीट नियंत्रण के पहलुओं पर निर्भर करती है ताकि पौधों को पोषक तत्वों की आपूर्ति की जा सके और कीटों की बीमारियों को नियंत्रित किया जा सके।

इस प्रकार, ऑर्गेनिक फार्मिंग से देशी मिट्टी में अपशिष्ट और अवशेषों का पुनर्चक्रण होता है, जो फसल के विकास के दौरान मिट्टी से नष्ट हुए पोषक तत्वों की भरपाई करता है, सूक्ष्मजीवों के विकास को प्रोत्साहित करता है जो फसल में मिट्टी में संग्रहित पोषक तत्वों के चरणबद्ध विमोचन को नियंत्रित कर सकता है। सही अनुपात, मिट्टी की नमी और मिट्टी के वातन को संतुलित करके मिट्टी के स्वास्थ्य को बनाए रखना और जटिल कार्बनिक अणुओं में पोषक तत्वों को मजबूती से बांधकर मिट्टी की उर्वरता को सुनिश्चित करना।

पारंपरिक अकार्बनिक खेती प्रणालियों के कारण होने वाली समस्याओं को कम करने के लिए जैविक खेती के लिए तीन विकल्प हैं–

शुद्ध जैविक खेती: अकार्बनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का बहिष्कार, लेकिन जैविक खादों और जैविक कीट नियंत्रण विधियों के उपयोग का समर्थन।

एकीकृत हरित क्रांति खेती: इस विकल्प के तहत, हरितक्रांति के मूल चलन जैसेकि बाहरी आदानों का गहन उपयोग, सिंचाई में वृद्धि, अधिक उपज और संकर किस्मों के साथ–साथ श्रम के मशीनीकरण को अधिक दक्षता के साथ बरकरार रखा जाता है। पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य को सीमित नुकसान के साथ इन आदानों का उपयोग। इस उद्देश्य के लिए कुछ जैविक तकनीकों को विकसित किया गया है और एकीकृत सिस्टम बनाने के लिए उच्च इनपुट तकनीक के साथ संयुक्त किया गया है, जैसेकि एकीकृत पोषक प्रबंधन (INM), एकीकृत कीट प्रबंधन (IPM) और जैविक नियंत्रण विधियां जोकि रसायन आवश्यकता को कम करती हैं।

एकीकृत कृषि प्रणाली: इस विकल्प में कम इनपुट वाली जैविक खेती शामिल है जिसमें किसानों को स्थानीय संसाधनों और पारिस्थितिकी प्रक्रियाओं, कृषि अपशिष्टों के पुनर्चक्रण और फसल अवशेषों पर निर्भर रहना पड़ता है। इसलिए, जीवन की गुणवत्ता में सुधार और प्राकृतिक संसाधनों की कमी को कम करने के लिए एक कृषि प्रणाली की आवश्यकता है, जिसके परिणामस्वरूप व्यवहार्य और टिकाऊ कृषि उत्पादन होता है।

भारतीय संदर्भ में, जैविक खेती स्थितियों के तहत अधिक लाभदायक हो सकती है, जहां मात्रा के बजाय, विशेष रूप से बागवानी फसलों में गुणवत्ता अधिक महत्वपूर्ण है और सब्जियां अधिक महत्वपूर्ण हैं क्योंकि वे प्रकृति में अधिकतर वार्षिक हैं।

- फलों और सब्जियों की फसलें जहां रासायनिक उर्वरकों की उच्च खुराक का उपयोग होता है, विशेष रूप से एक उच्च नाइट्रेट सामग्री और फसलों के असंतुलन को जन्म दे सकता है।
- चाय, कॉफी, काजू आदि जैसे वृक्षारोपण की फसलें जहां पोषक तत्वों की कमी कम होती है और पत्ती गिरने के माध्यम से इनकी रिसाइक्लिंग अधिक होती है।
- अन्य बागवानी फसलों में अंतर्राष्ट्रीय बाजारों के परिणामों में उच्च निर्यात क्षमता है।
- उच्च गुणवत्ता और निर्यात क्षमता वाली विभिन्न फसलों की स्थानीय किस्में।
- निर्यात क्षमता के साथ नीम, सूखे मेवे, तिलहन, दालें, कॉटन, बासमती चावल आदि।
- मिट्टी में पोषक तत्वों की उच्च फिक्सेशन क्षमता होती है जैसे कि केल्केरियस, अम्लीय और क्षारीय।

जैविक प्रणालियों में रूपांतरण के लिए फसल उत्पादन का विवरण

मृदा और जल संरक्षण

- मिट्टी के कटाव, पानी के संरक्षण, पानी के अधिक और अनुचित उपयोग और जमीन के प्रदूषण के साथ–साथ सतह के पानी को रोकने के लिए प्रासंगिक उपाय किए जाने चाहिए।
- क्षारीयता को रोकने के लिए प्रासंगिक उपाय किए जाने चाहिए।
- कार्बनिक पदार्थों के जलाने के बाद भूमि की सफाई सीमित होनी चाहिए।

फसलों और प्रजाति का चुनाव

- बीज और रोपण सामग्री पारंपरिक एवं प्रमाणित जैविक उत्पादन से होनी चाहिए।
- बीज उपचार अनुमेय उत्पादों के साथ किया जाना चाहिए।
- प्रमाणित जैविक बीज उपलब्ध नहीं होने पर, रासायनिक रूप से अनुपचारित बीज पारंपरिक सामग्री का उपयोग किया जा सकता है।
- सिंथेटिक कीटनाशकों, रसायनों, संबंधित या माइक्रोवेव के साथ उपचारित नई फसल के बीज और पौधों की सामग्री को केवल उन क्षेत्रों में अनुमति दी जा सकती है जहां जैविक कृषि प्रारंभिक अवस्था में है।
- आनुवांशिक रूप से इंजीनियर बीजों के उपयोग, ट्रांसजैनिक पौधों को अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

फसल चक्र

- कृषि योग्य भूमि पर फसल की कटाई के लिए न्यूनतम मानकों को निर्धारित करना चाहिए, फसल की प्रकृति, खरपतवारों की उपस्थिति और स्थानीय परिस्थितियों को ध्यान में रखना चाहिए।

खाद नीति

- खाद नीति में हरी खाद, पत्तियों का कूड़ा और वर्मी कम्पोस्टिंग शामिल होना चाहिए।
- मानव मल या अनुपचारित मलयुक्त खाद का उपयोग मानव उपभोग के लिए उत्पादित सब्जियों पर नहीं किया जाना चाहिए।

- किसी भी कार्बनिक कचरे को उनकी प्राकृतिक संरचना में लागू किया जाना चाहिए और रासायनिक उपचार द्वारा अधिक घुलनशील नहीं किया जाना चाहिए।
- सभी सामग्री मानकों के अनुसार होनी चाहिए। यूरिया सहित सभी सिंथेटिक नाइट्रोजन उर्वरकों को बाहर रखा जाना चाहिए।
- जैविक खेत में माइक्रोबियल, पौधों या जानवरों की उत्पत्ति के आधार पर इनपुट को शामिल करने के लिए प्रबंधकीय नीति होनी चाहिए, बशर्ते उनका मिट्टी और स्थानीय पारिस्थितिकी पर प्रतिकूल प्रभाव न हो।

कीट, रोग और खरपतवार प्रबंधन

- स्थानीय पौधों, जानवरों और सूक्ष्मजीवों से खेत में तैयार किए गए पारंपरिक प्रकृति के उत्पादों का उपयोग किया जाना चाहिए।
- भौतिक और थर्मिक दोनों तरीकों की अनुमति है। जब भी आवश्यक हो, दोनों कीटों और बीमारियों का मुकाबला करने के लिए मिट्टी के सौरकरण की अनुमति दी जाती है।
- सभी सिंथेटिक हर्बिसाइड्स, कवकनाशी, कीटनाशकों को सख्ती से प्रतिबंधित किया जाना चाहिए।

जैविक सब्जियों के लिए प्रौद्योगिकी पैकेज

- सभी मलबे, बुलबुले, पत्थरों आदि को हटाने और चींटियों और दीमक के संक्रमण से बचने के लिए 2 से 3 जुताई के साथ मिट्टी को बारीक रूप से तैयार करना। हालांकि, न्यूनतम जुताई को जैविक खेती का एक महत्वपूर्ण घटक माना जाता है।
- फार्म यार्ड खाद, पोल्ट्री खाद, मछली खाद, भेड़ खाद आदि के माध्यम से जैविक खादों की बेसल खुराक 25–38 टन/हे. की दर से उपयोग करना चाहिए।
- हरी खाद वाली फसलों जैसेकि सिसबनिया या ढैंचा को उगाना और मिट्टी में शामिल करना; इसके अलावा, अन्य पौधों की प्रजातियों के बायोमास का उपयोग करना।
- जैविक सब्जी उत्पादन में फसल अवशेषों का उपयोग आवश्यक है, जो मिट्टी की कार्बनिक पदार्थ सामग्री को बढ़ाता है, मिट्टी की उर्वरता की स्थिति को बनाए रखता है, और बदले में फसल की उपज को बढ़ाता है।

शोधकर्ताओं द्वारा किए गए अध्ययन में बताया गया है कि फसल के अवशेषों के पांच समूह जैसे कि भांग (कैनबिस सैटियस) के पत्ते, पार्थेनियम खरपतवार के पत्ते, गुलमोहर और पीपल के पत्तों को 15 टन/हेक्टेयर की दर से मृदा में लोबिया, आलू, खीरा के फसल चक्र में लोबिया फसल उगाने से पहले मिट्टी में मिलाया गया। प्रत्येक फसल की कटाई के बाद में लोबिया, आलू (हलुम) और खीरा के फसल अवशेषों को मृदा में मिलाया गया। इससे फसलों की उपज पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा और मिट्टी को कार्बनिक पदार्थों से समृद्ध किया।

- हमेशा फसल चक्र में फलियां, मटर, लोबिया आदि जैसी दलहनी फसल को शामिल करें, जो न केवल वायुमंडलीय नाइट्रोजन को एकत्र करके मिट्टी की उर्वरता में सुधार करती है बल्कि उपज को 30 से 35 प्रतिशत तक बढ़ाती हैं। फलीदार फसल में विशिष्ट राइजोबियल उपभेदों का टीकाकरण उनकी नाइट्रोजन फिक्सिंग क्षमता में और सुधार कर सकता है।

सब्जियों की किस्मों की पसंद जलवायु और बाजार की प्राथमिकता के आधार पर होनी चाहिए; इष्टतम दूरी और समय पर रोपण, पर्याप्त जैविक खाद और जैव उर्वरकों के साथ पौधों/पौध को उभारना और बेहतर स्थापना, विकास और उपज के लिए केवल स्वस्थ पौधरोपण का उपयोग करना।

- प्रत्येक फसल में कुछ किस्में होती हैं, जो कम संसाधन उपलब्धता के तहत बहुत अच्छा प्रदर्शन करती हैं और जैविक और अजैविक स्थितियों के लिए प्रतिरोधी होती हैं। खेती की लागत को कम करने के लिए ऐसी किस्मों को उगाया जा सकता है। आगे इस तरह की किस्में जैविक खेती के मानकों को पूरा कर सकती हैं, क्योंकि उन्हें कृषि रसायनों की आवश्यकता नहीं है। प्रजनकों को ऐसी फसल किस्मों का विकास करना होगा, जो सफलतापूर्वक खरपतवारों से मुकाबला कर सकें और कीट–पतंगों और बीमारियों को सहन/विरोध कर सकें। यह पता चला है कि फसल की किस्में, जो शुरुआती शक्ति दिखाती हैं, आमतौर पर खरपतवारों की वृद्धि में बाधा डालती हैं।
- जैविक खेती में जैव उर्वरक के अनुप्रयोग का बहुत महत्व है। चूंकि वे सब्जियों की फसलों की वृद्धि, उपज और गुणवत्ता में सुधार के लिए पोषण संबंधी उत्तेजक और चिकित्सीय भूमिका निभाते हैं। विभिन्न जैव उर्वरकों के साथ सब्जी फसलों के टीकाकरण ने बढ़ती उपज, गुणवत्ता और मिट्टी की उर्वरता के संदर्भ में उत्साहजनक प्रतिक्रिया को दर्शाया है। कई शोधकर्मियों की रिपोर्ट के अनुसार खेत में राइजोबियम की प्रतिक्रिया उत्साहजनक है। एजोटोबैक्टर और एजोस्पिरिलम ने सब्जियों की फसलों पर एक महत्वपूर्ण प्रभाव को दर्शाया, जिसके परिणामस्वरूप नाइट्रोजन की बचत 25–50 प्रतिशत और उपज में 1–42 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इसी तरह फॉस्फोरस सॉल्युबिलाइजर भी सामान्य रूप से 40 प्रतिशत फॉस्फोरस उर्वरकों को बचा सकता है और 4.7 से 5.1 प्रतिशत तक फसल की पैदावार बढ़ा सकता है।
- नमी की कमी वाले न्यूनतम खरपतवार के विकास को कम करने के लिए स्थानीय रूप से उपलब्ध पलवार सामग्री या पॉलिथीन शीट का उपयोग।
- रोग प्रतिरोधी किस्मों का उपयोग करें जो कीटों को नियंत्रित करने के लिए इको–सिस्टम को सूट करती हैं, खरपतवारों

को नियंत्रित करती हैं और सभी कीटों और रोगों के संक्रमित हिस्सों को हटाती हैं और ट्रैप–प्लांट बढ़ाती हैं। उदाहरण के लिए गोभी बोरर (गोभी में लगने वाला कीड़ा) के लिए– सरसों का उपयोग ट्रैप प्लांट और आलू, मिर्च, टमाटर की फसल में अनाज, तिलहन और अन्य सब्जियों के साथ किया जाता है। प्रतिरोधी/सहनशील किस्मों के उपयोग से कीटों और रोगों का नियंत्रण।

- विभिन्न कीटों और बीमारियों के नियंत्रण के लिए जैव कीटनाशकों और जैव–नियंत्रण विधियों का उपयोग करें। लहसुन के अर्क जैसे प्राकृतिक उत्पादों को व्यापक स्पेक्ट्रम कीटनाशकों के रूप में उपयोग किया जाता है। नीम, सबडिला और पाइरेथ्रम अर्क का उपयोग कीटनाशकों के रूप में भी किया जाता है। इसके अलावा, जैव उर्वरक जैसेकि एजोटोबैक्टर, एजोस्पिरिलम, पीएसबी, और फॉस्फोरस किसी भी अवशिष्ट या विषाक्त प्रभाव के बिना ऐंटिफंगल गतिविधियां होती हैं, जिसके परिणामस्वरूप टिकाऊ गुणवत्ता वाली सब्जी का उत्पादन होता है। माइकोराइज़ल कवक के साथ फसल का टीकाकरण राइज़ोटोनिया सोलनाई और फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरम के प्रतिरोध को बढ़ाता है। पिथियम की वजह से टमाटर की डंपिंग–ऑफ को काफी हद तक रोका जा सकता है। माइकोराइज्ड टमाटर के पौधों को नेमाटोड संक्रमण के प्रति अधिक प्रतिरोधी पाया गया।

जैविक उत्पादन प्रणाली के तहत सब्जी फसलों की उपज गुणवत्ता

कई उपभोक्ता पारंपरिक रूप से पैदा होने वाली उपज की तुलना में व्यवस्थित रूप से उत्पादित फल और सब्जियों को स्वास्थ्यवर्धक और सुरक्षित मानते हैं। इस वजह से, उपभोक्ता अक्सर व्यवस्थित रूप से उगाए गए फलों के लिए अधिक भुगतान करने को तैयार रहते हैं। कुछ फलों और सब्जियों की कार्बनिक संस्कृति विटामिन सी, लोहा, मैग्नीशियम, फास्फोरस और अन्य पोषण संबंधी महत्वपूर्ण खनिजों में काफी कम नाइट्रेट और कम भारी धातुओं (वर्थिंगटन, 2001) को बढ़ा सकती हैं। हालांकि, जैविक फल और सब्जियों का उत्पादन चुनौतीपूर्ण हो सकता है, खासकर ऐसी जलवायु में जहां खरपतवार, कीट और रोग नियंत्रण आवश्यक है। बिक्री हेतु उपज के साथ–साथ पोषक तत्व की मात्रा के मामले में सांस्कृतिक प्रथाएं फसल की सफलता को बहुत प्रभावित कर सकती हैं। पारंपरिक बनाम जैविक खेती प्रणालियों में उपयोग किए जाने वाले टमाटर की उपज और गुणवत्ता पर परस्पर विरोधी रिपोर्ट हैं। कोला एट अल (2000) ने बताया कि टमाटर की गुणवत्ता (ब्रिक्स, टिट्रेटेबल एसिडिटी और रंग) जैविक उत्पादन की तुलना में पारंपरिक रूप से अधिक थी, हालांकि पैदावार दोनों प्रणालियों के बीच भिन्न नहीं थी। हालांकि, लम्पकिन (2005) पारंपरिक और जैविक उत्पादन के बीच ब्रिक्स, लाइकोपीन और फलों की गुणवत्ता पर लगातार प्रभाव का निर्धारण नहीं कर सका। कैरिस–वेराट एट अल (2004) ने बताया कि संगठित रूप से उगाए गए टमाटरों में पारंपरिक रूप से उगाए गए फलों की तुलना में लाइकोपीन और कैरोटीन की मात्रा अधिक थी, जब डाटा को ताजा पदार्थ के रूप में व्यक्त किया गया था, लेकिन जब डाटा को शुष्क पदार्थ के रूप में व्यक्त किया गया था, तो कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं देखा गया था। एक साहित्य की समीक्षा जिसमें संगठित और पारंपरिक रूप से उगाए गए खाद्य पदार्थों की तुलना में 27 प्रकाशित अध्ययनों में कार्बनिक और पारंपरिक उपचारों के बीच कैरोटीन में कोई निरंतर अंतर नहीं बताया, और 17 प्रकाशनों में कुल चीनी सामग्री में कोई स्पष्ट प्रवृत्ति नहीं थी। लू एट अल (2003) ने पाया कि तरबूज में उच्च–इनपुट प्रबंधन प्रथाओं ने अधिक विपणन योग्य उपज/हेक्टेयर, अधिक संख्या में

विपणन योग्य फल/पौधे का उत्पादन किया, और निम्न–इनपुट प्रबंधन प्रथाओं की तुलना में उच्च फल वजन। ब्रा एट अल (2004) ने बताया कि संरक्षित जैविक परिस्थितियों में विकसित तरबूज संरक्षित पारंपरिक प्रणालियों के तहत उगाए गए उत्पादों की तुलना में अधिक कुल और विपणन योग्य उपज दे सकते हैं। जैविक उत्पादन में परिवर्तित करने में एक चुनौती उन कल्टरों की पहचान करना है जो विभिन्न प्रणाली स्थितियों, अर्थात् रोग और कीट प्रतिरोध, और खरपतवार के दबाव में अच्छी तरह से प्रतिक्रिया देंगे। इसके अतिरिक्त, कार्बनिक उत्पादन के समग्र प्रभाव को मापने में फाइटोकेमिकल सामग्री महत्वपूर्ण है।

सीमांत रूप से, परस्पर विरोधी परिणाम स्थानीय परिस्थितियों में काश्तकारों के प्रदर्शन का अध्ययन करने के महत्व को दर्शाते हैं। यह जानते हुए कि कौन–सी खेती विभिन्न उत्पादन प्रणालियों के तहत सबसे अच्छा प्रदर्शन करती है, और यह विश्लेषण करते हुए कि ये सिस्टम गुणवत्ता, उपज, और फाइटोन्यूट्रिएंट सामग्री को कैसे प्रभावित करते हैं, लगातार उच्च उपज, गुणवत्ता, व्यवस्थित तरबूज बनाए रखने में मदद करेंगे। डेविस एट अल (2006) ने बताया कि उच्च इनपुट उत्पादन विधि ने तरबूज की सभी खेती के लिए उत्पादित फलों की संख्या को लगभग दोगुना कर दिया है, अधिक पैदावार और भारी औसत फल वजन का उत्पादन किया है, लेकिन कम गुणवत्ता वाले उत्पादन के साथ फल की गुणवत्ता (कम ब्रिक्स और लाइकोपीन सामग्री) में कमी आई थी।

भारत से केस का अध्ययन

सब्जी उत्पादकता, गुणवत्ता और मृदा स्वास्थ्य के स्रोतों और स्तरों के प्रभाव पर एक अध्ययन भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी में सब्जी–आधारित फसल प्रणालियों में आयोजित किया गया था। अनुशंसित खनिज उर्वरकों के प्रभाव का मूल्यांकन करने के उद्देश्य से विभिन्न प्रकार की जैविक खादों और इसकी खुराक में वृद्धि, फल की उपज और बैंगन, गोभी और मटर की गुणवत्ता का मूल्यांकन किया जाता है। उपचार तीन कार्बनिक स्रोतों और इसके तीन स्तरों से मिलकर बनता है। इसकी तुलना अकार्बनिक नियंत्रण (एनपीके की अनुशंसित खुराक) से की गई थी। तीन क्रॉपिंग सिस्टम C1 = बैंगन, लौकी, सेसबानिया ग्रीनमैनुरिंग, C2 = गोभी, ग्वैसिया, सेसबानिया ग्रीनमैनुरिंग, मूली और C3 = मटर, ओकेरा,सेसबानिया ग्रीनमैनुरिंग, ककड़ी थे। कार्बनिक स्रोतों को रोपाई से 15 दिन पहले लगाया गया और खेत की तैयारी में अच्छी तरह मिलाया गया। जैविक कीटनाशकों से युक्त संयंत्र आधारित संरक्षण की आवश्यकता भी लागू की गई थी। शोध में बताया गया है कि सभी तीनों जैविक स्रोतों ने पूर्ण नियंत्रण की तुलना में बैंगन की उच्च फल उपज का उत्पादन किया, और यह अनुशंसित खुराक पर अकार्बनिक उर्वरक के प्रयोग के बाद प्राप्त उपज–स्तर के बराबर था।

25 टन/हे. फार्म यार्ड खाद से निषेचित मृदा ने पौधे की बेहतर वृद्धि और उच्चतम कुल फल की पैदावार का उत्पादन किया। तीनों स्रोतों में, बढ़ती हुई खुराक के साथ उपज बढ़ी और उच्चतम खुराक के साथ उच्च उपज दर्ज की गई। जैविक खादों का संयुक्त अनुप्रयोग इसके एकमात्र आवेदन पर प्रभावी साबित नहीं हुआ। उपज में वृद्धि फल एवं पौधे की अधिक संख्या और उच्च औसत फलों के वजन से जुड़ी थी। मटर में, जैविक स्रोतों के नियंत्रण पर हरी फली उपज का काफी अधिक उत्पादन प्राप्त हुआ। हालांकि, अनुशंसित खुराक पर कार्बनिक स्रोतों के प्रयोग के कारण हरी फली की उपज में कोई उल्लेखनीय वृद्धि नहीं देखी गई। अकार्बनिक नियंत्रण की तुलना में दिलचस्प रूप से कार्बनिक स्रोतों के संयोजन ने 25.37 से 37.51 प्रतिशत उच्च फली उपज दर्ज की गई। यह भी देखा गया कि तीनों की बढ़ती खुराक से मटर में हरी फली की उपज बढ़ गई। सबसे अच्छा मेल नेडेप (NADEP) खाद/10 टन/हे. के साथ फार्म यार्ड खाद (10 टन/हे.) का उत्पादन सबसे अच्छी प्रतिक्रिया थी। गोभी में, सभी तीन स्रोतों ने नियंत्रण पर काफी अधिक उपज प्राप्त की है। विभिन्न कार्बनिक स्रोतों के अलावा, गोभी की उपज और प्रमुखता के संबंध में बहुत भिन्नता थी। यह भी देखा गया कि तीनों स्रोतों में वृद्धि से गोभी की पैदावार में वृद्धि हुई है। बैंगन, मटर और गोभी में इनऑर्गेनिक सिस्टम की तुलना में जैविक प्रणाली के तहत बेहतर विटामिन सी सामग्री के रूप में सब्जियों की गुणवत्ता। फार्म यार्ड खाद उपचारित भूखंडों (25 टन/हे.) के साथ न्यूनतम 32.15 मिलीग्राम/100 ग्राम अकार्बनिक नियंत्रण के लिए विटामिन सी सामग्री अकार्बनिक नियंत्रण से अधिकतम 36.54 मिलीग्राम/100 ग्राम गोभी तक होती है। इसी तरह मटर और बैंगन, विटामिन सी सामग्री 10.24 से 13.12 मिलीग्राम/100 ग्राम और 18.32 से 24.15 मिलीग्राम/100 ग्राम तक क्रमशः अकार्बनिक नियंत्रण और फार्म यार्ड खाद/25 टन/हे. उपचारित भूखंडों में भिन्न होती है। गोभी, मटर और बैंगन में रंग और बनावट में कोई सुसंगत प्रवृत्ति नहीं थी।

निष्कर्ष

यह बहुत तर्कसंगत होना चाहिए और केवल उन मामलों में ही कार्बनिक स्रोतों के उपयोग पर विचार करना चाहिए, जहां सबसे अधिक लाभकारी व किफायती हैं और स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से उत्पादन बहुत उच्च मानकों का होना चाहिए। भारतीय संदर्भ में, जैविक खेती निम्नलिखित परिस्थितियों में अधिक लाभदायक हो सकती है, जहां मात्रा के बजाय, गुणवत्ता अधिक महत्वपूर्ण है। उत्पादन की कम लागत वाली जैविक कृषि का वैश्विक बाजार में भारतीय कृषि व्यापार पर सीधा प्रभाव पड़ेगा। पैदावार को कम/त्याग किए बिना इनपुट/संसाधन आवेदन में कमी के लिए संसाधन संरक्षण प्रौद्योगिकी का अनुप्रयोग प्रौद्योगिकी विकास और इसके प्रदर्शन में भविष्य का लक्ष्य होना चाहिए।

(भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली के संरक्षित कृषि प्रौद्योगिकी केन्द्र (सब्जी विज्ञान) में प्रधान वैज्ञानिक हैं।)

ई–मेल : pksingh128@gmail.com

जैविक खेती के लिए पोषक तत्व प्रबंधन

–डॉ. विनोद कुमार शर्मा, डॉ. सर्वेन्द्र कुमार, कपिल आत्माराम चौबे

भारतीय कृषि में जैविक खेती मृदा उर्वरता एवं उत्पाद गुणवत्ता के लिए सबसे महत्वपूर्ण पूंजी है। अगर मृदा स्वस्थ होगी तो फसल उत्पादन के साथ अधिक गुणवत्तायुक्त उत्पाद ले सकेंगे। साथ ही साथ बढ़ती जनसंख्या तथा खाद्यान्न उत्पादन के बीच संतुलन स्थापित कर सकेंगे।

आज़ादी से पहले देश में पारंपरिक खेती बिना रसायन उर्वरकों के उपयोग तथा जैविक खादों के इस्तेमाल के साथ जैविक तरीके से की जाती थी। लेकिन आज़ादी के बाद, खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर होने के लिए भारतीय कृषि में रसायनों एवं कीटनाशकों के प्रयोग बढ़ाने के कारण भरपूर मात्रा में अन्न उत्पादन होने लगा जो एक सपने की तरह था क्योंकि गेहूं, धान और मक्का की खेती में काफी विकास होने से उत्पादन में निरंतर वृद्धि होती गई जिससे देश खाद्यान्न उत्पादन में आत्मनिर्भर होने के साथ–साथ इनमें से कुछ खाद्यान्नों का निर्यात करने की स्थिति में भी है। विडम्बना यह रही कि अत्यधिक मात्रा में इन रसायनों एवं कीटनाशकों के प्रयोग से फसल उत्पाद गुणवत्ता में गिरावट के साथ–साथ मानव स्वास्थ्य एवं मृदा स्वास्थ्य में गिरावट आई है और पर्यावरण प्रदूषण के रूप में भी इसका खामियाज़ा भुगतना पड़ रहा है। पोषक तत्वों का फसल उत्पादन में महत्वपूर्ण स्थान है, इनकी आपूर्ति के लिए रसायनिक उर्वरक, गोबर खाद, जीवाणु खाद, कम्पोस्ट आदि का उपयोग मुख्य रूप से किया जाता है। छोटे व सीमांत किसानों द्वारा उपयोग में प्रयुक्त रसायनिक उर्वरकों की बढ़ती कीमतों के कारण उत्पादन लागत अधिक होने से आज की खेती घाटे का सौदा हो गई है। इसीलिए अब यह आवश्यक हो गया है कि पादप पोषण के कुछ ऐसे सस्ते वैकल्पिक उपाय प्रयोग में लाए जाएं जिसकी उपलब्धता आसान एवं सस्ती होने के साथ–साथ पर्यावरण अनुकूल भी हो। ऐसी दशा में जीवाणु खाद, जैविक खाद एवं कम्पोस्ट का उपयोग आवश्यक हो जाता है।

अन्न उत्पादन में आज देश आत्मनिर्भर हुआ है परंतु इसके दुष्परिणाम से जैसे मृदा में कार्बनिक पदार्थों की कमी, समस्याग्रस्त मृदा, मृदा उर्वरता में कमी तथा मृदा रसायनों के अवशेष प्रचुर मात्रा में होने के कारण मृदा जीवों में कमी, जल एवं वायु प्रदूषण तथा मानव स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव हुआ है। जैविक खेती से ही इस तरह के सभी दुष्परिणामों से बचा जा सकता है।

किसानों को जैविक खेती के लिए पोषक तत्व प्रबंधन हेतु विभिन्न प्रकार की कार्बनिक खादों जैसे जैविक खाद, केंचुआ खाद,

गोबर खाद, कम्पोस्ट, हरी खाद, फसल अवशेष इत्यादि तथा जीवाणु खाद का प्रयोग करने से मृदा उत्पादकता में बिना गिरावट तथा उच्च फसल उत्पादन के साथ मृदा उर्वराशक्ति बनाई रखी जा सकती है।

भारतीय कृषि में जैविक खाद का महत्वपूर्ण स्थान है इसीलिए इनका अधिक से अधिक मात्रा में प्रयोग कर जैविक खेती को बढ़ावा दिया जा सकता है।

वैज्ञानिक तरीकों से जैविक खाद, मृदा में उपस्थित लाभकारी सूक्ष्म जीवों का चुनाव कर प्रयोगशालाओं में तैयार की जाती है। वायुमंडल के नत्रजन व मृदा फॉस्फोरस को पौधों को उपलब्ध कराने वाले जीवाणुओं को मिलाकर यह जैविक खाद तैयार की जाती है। जैविक खाद बनाते समय लाभदायक जीवाणुओं की संख्या एक ग्राम में करोड़ों से अधिक और कम भी हो सकती है।

ये जीवाणु निम्न प्रकार के होते है–

- **एजेटोबेक्टर–** यह जीवाणु ज़मीन में स्वतंत्र रूप से रहकर हवा की नत्रजन को ग्रहण कर मृदा में एकत्रित करते हैं जो पौधों को उपलब्ध होती है। यह जीवाणु खाद बिना दलहन वाली फसलों में उपयोग की जाती है।
- **राइजोबियम–** राइजोबियम एक मृदा बेक्टेरिया है जो दलहनी फसलों की जड़ों पर गांठे बनाकर उनमें रहते हैं तथा हवा से नत्रजन लेकर पौधों को उपलब्ध कराते हैं।
- **फॉस्फेट विलेयक जीवाणु–** यह मृदा में उपस्थित अघुलनशील फॉस्फोरस को घुलनशील अवस्था में परिवर्तित करके पौधों को उपलब्ध कराता है।
- **एजोस्पाइरिलम कल्चर–** यह जीवाणु खाद खरीफ फसलों जैसे धान, मोटे अनाज तथा गन्ने की फसल के लिए विशेष उपयोगी है। साथ ही, गेहूं व जौ की फसल के लिए भी लाभकारी है। इसका प्रयोग करने से अधिकांशतः फसल उत्पादन में वृद्धि होती है।
- **नीलहरित शैवाल–** यह धान की फसल जिसमें पानी भरा रहता है, विशिष्ट लाभकारी होते हैं। पानी भरे खेत में छिड़काव के लिए कम से कम 10 किलोग्राम प्रति हेक्टेयर की आवश्यकता होती है। इसके द्वारा 15–25 किलोग्राम नत्रजन प्रति हेक्टेयर उपलब्ध हो जाता है। साथ ही, फसल उपज में बढ़ोतरी होती है।

जीवाणु खाद उपयोग की विधि

उच्च फसल उत्पादन के लिए जीवाणु खाद का उपयोग निम्न प्रकार से किया जा सकता है जैसे–

क) मृदा उपचार– नमीयुक्त मिट्टी में जीवाणु खाद को अच्छी तरह मिलाकर शाम के समय पूरे खेत में छिड़काव कर सिंचाई कर देनी चाहिए।

ख) बीजोपचार– एक लीटर गर्म पानी में लगभग 150 ग्राम गुड़ घोल ले। इसे ठंडा करने के बाद इसमें जीवाणु खाद के तीन पैकेट, एक हेक्टेयर क्षेत्र हेतु अच्छी तरह मिला लें। अब इस घोल को बीज की उपयुक्त मात्रा, एक हेक्टेयर क्षेत्र के लिए आवश्यक बीज मात्रा पर छिड़कते हुए हल्के हाथ से अच्छी तरह से पलटते हुए मिला लें, जब जीवाणु खाद के बीजों के ऊपर एक बारीक परत चढ़ जाए। इसके बाद बीजों को किसी छाया में सुखाकर शीघ्र ही बुआई कर देनी चाहिए।

ग) जड़ों का उपचार– तैयार नर्सरी से निकाले हुए पौधों जैसे फल, सब्जियां एवं अन्य पौधों को रोपाई से पहले इनकी जड़ों को जीवाणु खाद के घोल में लगभग 15 मिनट तक डुबोकर रखे तथा बाद में इनकी रोपाई कर देनी चाहिए।

जीवाणु खाद उपयोग हेतु सावधानियां

- जीवाणु खाद का उपयोग पैकेट पर लिखी फसल के लिए एवं पैकेट पर अंकित अंतिम तिथि से पूर्व ही करें।
- गुड़ के गर्म घोल में जैविक खाद को नहीं मिलाना चाहिए। क्योंकि जीवाणुओं के मर जाने की अधिक संभावना रहती है।
- जैविक खाद को अत्यधिक ठंड, गर्मी एवं धूप से बचाकर रखना आवश्यक है।
- बीज को कवकनाशी, कीटनाशी एवं जैविक खाद क्रम में उपचारित करने के बाद ही उपयोग करना चाहिए।
- उपचारित बीज को छाया में सुखाना आवश्यक है।

जीवाणु खाद के लाभ

- जीवाणु खाद पोषक तत्वों को आवश्यकतानुसार प्रदान करके फसल उत्पादन व उत्पादकता को बढ़ाते हैं।
- सूक्ष्म जीवाणु मृदा में मौजूद फॉस्फोरस को घुलनशील अवस्था में परिवर्तित करके पौधों के लिए इसकी उपलब्धता को बढ़ाते है।
- जीवाणु खाद फसल के लिए आवश्यक नत्रजन एवं फॉस्फोरस की उपलब्धता सुनिश्चित करते हैं।
- सूक्ष्मजीव कुछ मात्रा में सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसेः जिंक, तांबा, सल्फर, लोहा, बोरोन, कोबाल्ट व मोलिबिडिनम इत्यादि पौधों को प्रदान करते हैं।
- सूक्ष्म जीवाणु खेत में बचे हुए कार्बनिक अपशिष्टों को सड़ाकर मृदा में कार्बनिक पदार्थ की उचित मात्रा बनाए रखते हैं।
- सूक्ष्म जीवाणु मृदा में पनप रहे रोगजनक फफूंद को नष्ट कर लाभकारी जीवाणुओं की संख्या में वृद्धि करते हैं।
- जीवाणु खाद के उपयोग से फसलोत्पादन बढ़ता है। साथ ही, गुणवत्तायुक्त उत्पाद प्राप्त होता है।
- जीवाणु खादों के उपयोग से मृदा की जलधारण शक्ति व उर्वराशक्ति बढ़ती है जो फसलोत्पादन बढ़ाने में सहायक होते हैं।

अन्य कार्बनिक खादें

कार्बनिक खादें जैसे– गोबर खाद, कम्पोस्ट (ग्रामीण एवं शहरी), केंचुए की खाद (वर्मी कम्पोस्ट), हरी खाद (ढेंचा, सनई एवं मूंग) तथा खलियां (नीम एवं अरंडी) इत्यादि में लगभग सभी मुख्य पोषक तत्व पाए जाते हैं। साथ ही, प्रचुर मात्रा में कार्बनिक पदार्थ

भी होता है जो मृदा के भौतिक एवं रासायनिक गुणों को बनाए रखने में सहायक होते हैं। विभिन्न साधनों से प्राप्त इन पदार्थों से नाइट्रोजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश के रूप में पोषक तत्वों की आपूर्ति की जा सकती है।

वर्मी कम्पोस्ट (केंचुए की खाद)

केंचुए की मदद से निर्मित जैविक खाद को वर्मी कम्पोस्ट कहते हैं, जिसे किसान भाई स्वयं बना सकते हैं।

वर्मी कम्पोस्ट बनाने की विधि

सबसे पहले ऐसे स्थान का चयन करें जहां एक छप्पर या अस्थायी शेड बनाने के बाद उपयुक्त तापमान एवं नमी मिल सके। वर्मी टेंक का मानक आकार 1 मी. चौड़ा, 0.5 मी. गहरा तथा 10 मी. लंबा होता है। शेड की लंबाई–चौड़ाई वर्मी टेंक की संख्या पर निर्भर करती है।

सामग्री के रूप में कृषि अवशेष (फसल अवशेष), जलकुंभी, पेड़ों की हरी एवं सूखी पत्तियां, हरी शाखाएं, घास, सड़ी–गली सब्जियां एवं फल, घरेलू कचरा एवं पशुओं के गोबर आदि को उपयोग में लाया जाता है।

नमीयुक्त वानस्पतिक कचरे में गोबर का घोल मिलाकर 15 दिनों तक सड़ाने के बाद 15 सेंटीमीटर की परत लगा देते हैं। जिस पर पके हुए गोबर की लगभग पुनः 15 सेंटीमीटर परत लगाकर उस पर 500–1000 केंचुए प्रति वर्गमीटर की दर से डाले जाते हैं। केंचुए की सर्वाधिक उपयुक्त प्रजातियां जैसे आइसिनिया फोयटिडा, यूड्रिलस यूजिनी एवं परियोनिक्स एक्सावेट्स ये सभी वर्मी कम्पोस्टिंग के लिए उत्तम पाई गई हैं। इसके बाद अधसड़े एवं बारीक वानस्पतिक कचरे की एक फीट ऊंची परत लगा दी जाती है। इस प्रकार डोम के आकार के ढेर को जूट के बोरों से ढक दिया जाता है। शेड में हमेशा अंधेरा रहने पर केंचुए अधिक सक्रिय रहते हैं। नियमित रूप से आवश्यकतानुसार पानी का छिड़काव किया जाता है, लगभग 25–30 दिन के बाद हाथों या लोहे के पंजे की सहायता से टैंक के ढेर को धीरे–धीरे पलटते रहना चाहिए जिससे वायु का संचार एवं तापमान भी ठीक रहता है। टैंक के अंदर का तापमान 25.30 डिग्री सेंटीग्रेड एवं नमी 30.35 प्रतिशत रहनी चाहिए। यह क्रिया 2–3 बार दोहराई जाती है। पानी द्वारा तापमान एवं नमी को नियंत्रित किया जा सकता है।

लगभग 60–75 दिनों में वर्मी कम्पोस्ट तैयार हो जाती है। इस समय केंचुए के द्वारा निकाली गई कास्टिंग दिखाई देंगी। इस खाद को शेड से निकाल कर पॉलीथीन की चादर पर रखा जाता है। 2–3 घंटे के पश्चात् केंचुए पॉलीथीन की सतह पर आ जाते हैं। वर्मी कम्पोस्ट को अलग कर नीचे एकत्र हुए केंचुओं को एकत्रित कर पुनः वर्मी कम्पोस्ट बनाने के लिए प्रयोग करें। इस खाद को छाया में सुखाकर 8.12 प्रतिशत नमी के साथ खाद को बोरी में भरकर में एक साल तक भंडारण कर सकते हैं।

एक दिन में एक किलोग्राम वयस्क केंचुए (जिनकी संख्या लगभग 1000 वयस्क केंचुए) लगभग 5 किलोग्राम कचरे को खाद में बदल देते हैं। ऊपर बताई गई विधि से मात्र 60–75 दिन में 10X1X0.5 मीटर टैंक से लगभग 5.6 कुंतल वर्मी कम्पोस्ट तैयार हो जाती है जिसके लिए लगभग 10.12 कुंतल कच्चा पदार्थ लगता है।

वर्मी कम्पोस्ट प्रयोग करने के लाभ

- वर्मी कम्पोस्ट मृदा को भुरभुरी एवं उपजाऊ बनाती है जिससे मृदा में पोषक तत्व व जलधारण क्षमता बढ़ जाती है एवं मिट्टी में हवा का आवागमन भी ठीक रहता है।
- वर्मी कम्पोस्ट मृदा में कार्बनिक पदार्थ को बढ़ाता है तथा मृदा में जैविक क्रियाओं को निरंतरता प्रदान करता है।
- इसमें पौधों के आवश्यक पोषक तत्व प्रचुर व संतुलित मात्रा में होते हैं।
- वर्मी कम्पोस्ट इस्तेमाल से 2–3 फसलों तक पोषक तत्वों की उपलब्धता बनी रहती हैं।
- वर्मी कम्पोस्ट में दूसरी खादों की तुलना में आवश्यक पोषक तत्वों की मात्रा ज्यादा पाई जाती है जिसके कारण दूसरी खादों की तुलना में इसकी कम मात्रा ही काम आती है।
- वर्मी कम्पोस्ट में लगभग नत्रजन की मात्रा 1 से 5 प्रतिशत, फॉस्फोरस 1 से 1.5 प्रतिशत तथा पोटाश 1.5 से 2.0 प्रतिशत होती है।
- केंचुए की विष्ठा में पेरीट्रापिक झिल्ली होती है जो भूमि में धूलकणों से चिपक कर भूमि से वाष्पीकरण रोकती है।
- वर्मी कम्पोस्ट पूर्ण रूप से पर्यावरण अनुकूल विधि है, जबकि रासायनिक उर्वरकों के निर्माण में ऊर्जा के उपयोग से लेकर इस्तेमाल तक हर स्तर पर प्रदूषण की समस्या पैदा होती है।
- इसके प्रयोग से मृदा में लाभप्रद सूक्ष्म जीवाणुओं जैसे नत्रजन और फास्फोरस स्थिरीकरण, जीवाणु, प्रोटोजोआ, फफूंदी आदि की संख्या में वृद्धि होती है, जो पौधों की भूमि में उपलब्ध भोज्य पदार्थ को सरल रूप में उपलब्ध कराते हैं।

वर्मी कम्पोस्ट बनाते समय रखी जाने वाली सावधानियां

- वर्मी कम्पोस्ट के निर्माण के लिए गाय का गोबर सर्वोत्तम होता है, परंतु कभी भी आक तथा धतुरे के पत्ते इस मिश्रण में ना डालें अन्यथा इसके जहरीले प्रभाव से केंचुए मर सकते हैं।
- वर्मी कम्पोस्ट का शेड छायादार जगह पर ही बनाया जाना चाहिए तथा बेड पर अंधेरा बनाए रखना चाहिए क्योंकि केंचुए अंधेरे में ज्यादा क्रियाशील होते हैं।
- सड़े–गले कार्बनिक पदार्थ व गोबर को अच्छी प्रकार मिलाना चाहिए ताकि कार्बन–नाइट्रोजन का अनुपात संतुलित रहे।
- 10–15 दिन पुराना गोबर उपयोग करें। क्योंकि ताजा गोबर इस्तेमाल से निकलने वाली गर्मी (गैस) से केंचुए मर सकते हैं एवं दीमक का आक्रमण हो सकता है।
- वर्मी कम्पोस्ट बेड का तापमान 25–30 डिग्री सेल्सियस तथा नमी 30–35 प्रतिशत तक पानी के सहायता से बनाए रखनी चाहिए।

- कूड़े–कचरे में पत्थर, कांच तथा प्लास्टिक आदि नहीं होने चाहिए।
- वर्मी कम्पोस्ट बेड को तैयार कर लेने के 5–6 दिन बाद ही केंचुए छोड़े जाने चाहिए क्योंकि यदि छिड़काव के दौरान गड्ढे में पानी अधिक हो गया तो गड्ढा पक्का होने के कारण रिसेगा नहीं जिससे केंचुए मर सकते हैं।
- गड्ढों को चींटियों, कीड़ों–मकोड़ो, मुर्गियों, कौओं तथा पक्षियों आदि से सुरक्षित रखें।

जैविक खेती में जैविक खादों का योगदान

- जैविक खादों के उपयोग से मृदा का जैविक–स्तर बढ़ता है, जिससे लाभकारी जीवाणुओं की संख्या बढ़ जाती है और मृदा काफी उपजाऊ बनी रहती है।
- जैविक खाद पौधों की वृद्धि के लिए आवश्यक खनिज पदार्थ प्रदान कराते हैं, जो मृदा में मौजूद सूक्ष्मजीवों के द्वारा पौधों को मिलते हैं जिससे पौधे स्वस्थ बनते हैं और उत्पादन बढ़ता है।
- रासायनिक खादों के मुकाबले जैविक खाद सस्ते, टिकाऊ तथा बनाने में आसान होते हैं।
- इनके प्रयोग से मृदा में ह्यूमस की बढ़ोतरी होती है व मृदा की भौतिक दशा में सुधार होता है।
- पौध वृद्धि के लिए आवश्यक पोषक तत्वों जैसे नाइट्रोजन, फॉस्फोरस एवं पोटाश तथा काफी मात्रा में गौण पोषक तत्वों की पूर्ति जैविक खादों से हो जाती है।
- जैव उत्पादों द्वारा कीटों, बीमारियों तथा खरपतवारों का नियंत्रण काफी हद तक प्राकृतिक साधनों (जैसेः फसल चक्र, कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं, प्रतिरोध किस्मों) द्वारा ही कर लिया जाता है।
- जैविक खाद के सड़ने पर मृदा का पी. एच. मान कम हो जाता है। अतः 7 पी. एच. मान से कम पर सूक्ष्म पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ जाती है। यह तत्व फसल उत्पादन में आवश्यक है।
- इन खादों के उपयोग से पोषक तत्व पौधों को काफी समय तक मिलते रहते हैं। यह खादें अपना अवशिष्ट गुण मृदा में छोड़ती हैं। अतः एक फसल में इन खादों के प्रयोग से दूसरी फसल को लाभ मिलता है। इससे मृदा उर्वरता का संतुलन ठीक रहता है।

मृदा उर्वरता बनाए रखने के लिए सुझाव

फसल चक्र में हरी खाद, फसलों के अवशेष तथा दलहनी फसलों का समावेश अवश्य करें।

- दलहनी फसलों में जैविक उर्वरकों का प्रयोग अवश्य करें।
- कार्बनिक खादों जैसे गोबर खाद, संवर्धित कम्पोस्ट, कम्पोस्ट इत्यादि का प्रयोग ही करें।
- उर्वरकों का प्रयोग हमेशा संतुलित रूप में करें जिससे उर्वरक उपयोग क्षमता में वृद्धि हो सके।
- फसल चक्र में फसलों का चुनाव इस प्रकार करें कि प्रथम फसल से बचे हुए पोषक तत्वों का सही उपयोग हो सके एवं मृदा से पोषक तत्वों का सही अवशोषण हो सके।
- सघन खेती में समन्वित पोषक तत्व प्रबंधन अपनाएं जिसमें उर्वरकों के साथ गोबर की खाद, हरी खाद, फसल अवशेषों एवं जैविक उर्वरकों का प्रयोग किया जाता है।
- जैविक खादों का प्रयोग सही समय, सही विधि एवं सही साधन से करें।

अतः सक्षिप्त में कह सकते हैं कि भारतीय कृषि में जैविक खेती मृदा उर्वरता एवं उत्पाद गुणवत्ता के लिए सबसे महत्वपूर्ण पूंजी है। अगर मृदा स्वस्थ होगी तो फसल उत्पादन के साथ अधिक गुणवत्तायुक्त उत्पाद ले सकेंगे। साथ ही साथ बढ़ती जनसंख्या तथा खाद्यान्न उत्पादन के बीच संतुलन स्थापित कर सकेंगे।

(डॉ. विनोद कुमार शर्मा भा.कृ.अनु.प.– भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन विज्ञान संभाग में प्रधान वैज्ञानिक है और डॉ. सर्वेन्द्र कुमार एवं कपिल आत्माराम चौबे वैज्ञानिक हैं।)

ई–मेल : vksharma.iari@gmail.com

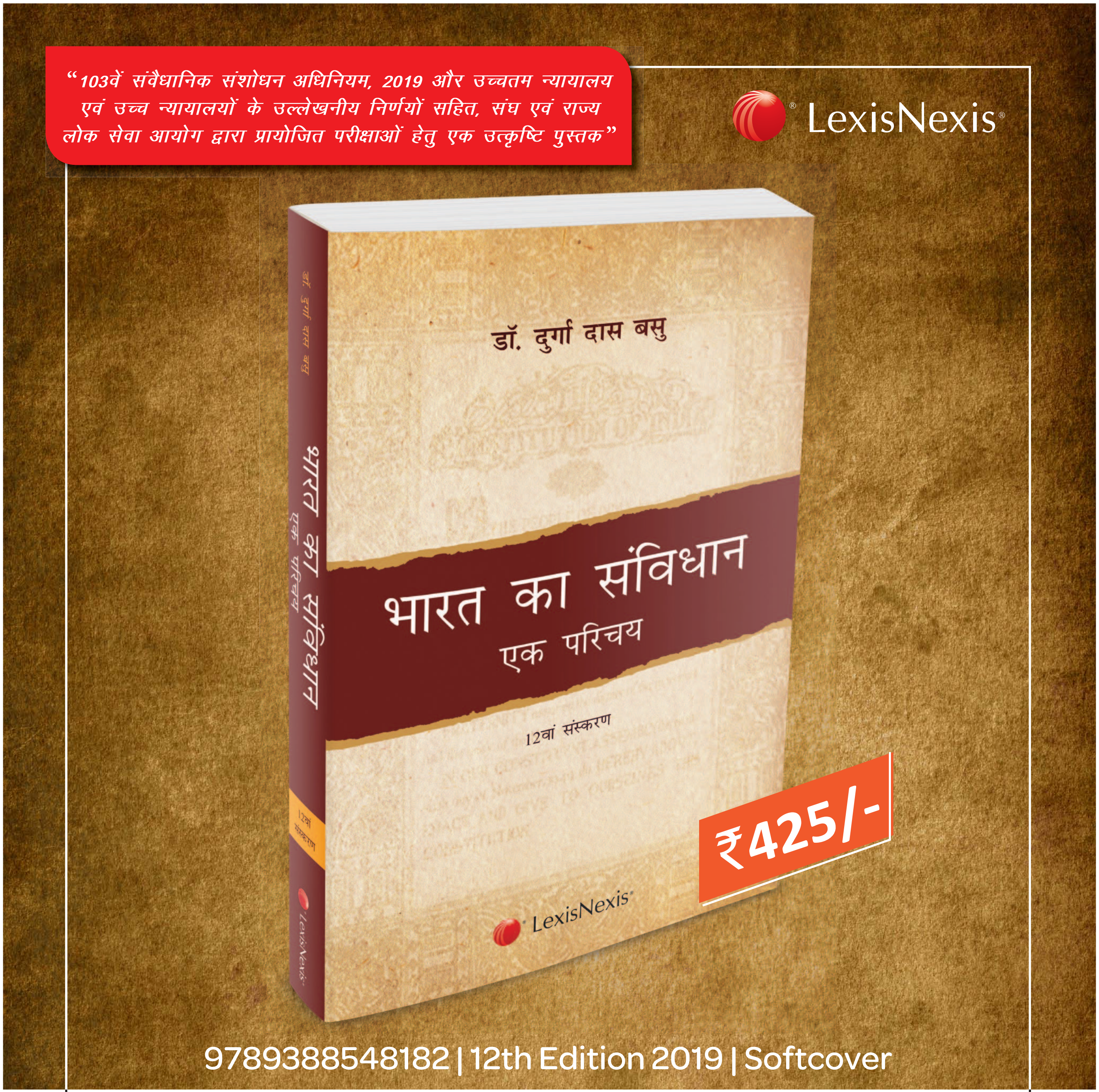

डी डी बसु का भारत का संविधान एक परिचय एक अग्रणी काम है जो उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है जो भारत के संविधान की उत्पत्ति और विकास का अध्ययन करना चाहते हैं। यह शीर्षक सामान्य पाठकों, राजनेताओं, पत्रकारों, राजनीतिज्ञों और प्रशासनिक अधिकारियों के लिए संविधान पर एक परिचयात्मक अध्ययन के रूप में कार्य करता है। यह *LL.B.*, *LL.M.*, *B.A.* और *M.A.* (राजनीति विज्ञान) पाठ्यक्रमों की आवश्यकताओं के साथ-साथ संघ और राज्य लोक सेवा आयोगों द्वारा आयोजित प्रतियोगी परीक्षाओं की आवश्यकताओं को भी पूरा करता है।

Buy online at www.lexisnexis.in and get 10% Discount

For more details, write to us at **marketing.in@lexisnexis.com**
or call us on our Toll Free Nos. (Mon- Fri, 8:30 am to 5 pm) **Airtel: 1800-102-8177, BSNL: 1800-180-7126**

जैविक खेती की उन्नत तकनीकें

–डॉ. वीरेन्द्र कुमार

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के पूसा स्थित सूक्ष्म जीव विज्ञान संभाग ने तरल जैविक उर्वरकों का उत्पादन भी शुरू कर दिया है। इनका जीवनकाल एक वर्ष से अधिक है। इनमें जीवाणुओं की उच्च संख्या होती है। साथ ही इनका भंड़ारण व प्रयोगविधि बहुत ही आसान है।

फसल उत्पादन बढ़ाने हेतु देश में प्रति वर्ष लाखों टन कृषि रसायनों का प्रयोग किया जाता है। इनसे मृदा, जल और वायु प्रदूषण को बढ़ावा मिलता है और जो अंततः हमारे स्वास्थ्य पर भी प्रतिकूल असर डालता है। सामान्यतः देखने में ऐसी घटनाएं आती रहती हैं कि फसलों को कीटों व रोगों से बचाने के लिए किसान प्रायः जहरीले कृषि रसायनों का छिड़काव करते रहते हैं। इन फसलों को खाकर अक्सर खरगोश, मोर, बंदर, हिरन व नील गाय जैसे पशु–पक्षी भी अपनी जान गवां बैठते हैं। इस तरह कृषि रसायनों का बढ़ता प्रयोग जैव विविधता को भी प्रभावित कर रहा है। इसके अलावा, फसलों में विषाक्त रसायनों का प्रयोग स्वतः ही कई गंभीर समस्याओं को जन्म देता है जिनमें कीट–पतंगों में कीटनाशी के प्रति प्रतिरोधकता, कीटनाशक अवशेष और फसलों में परागण करने वाले लाभकारी कीटों जैसे मधुमक्खी, भंवरे, तितली, परजीवी व प्रीडेटर्स की सक्रियता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। यह सर्वविदित तथ्य है कि फूलों का परागण केवल मधुमक्खियों के बल पर होता है। मधुमक्खियों की सक्रियता सुबह के समय अधिक होती है। अतः जहां तक हो सके, दोपहर बाद ही जैविक कीटनाशियों का छिड़काव करना चाहिए। इसके अलावा, हरितक्रांति के साथ ही भारत के खेतों में यूरिया का प्रयोग तेजी से बढ़ा। शुरुआती दौर में इसने फसलों का उत्पादन तो बढ़ाया, लेकिन इसके बाद उत्पादकता या तो स्थिर है या घट रही है। वर्ष 1960–61 में जहां नाइट्रोजन उर्वरकों के तौर पर यूरिया का प्रयोग केवल 10 प्रतिशत था, वह आज बढ़कर 80 प्रतिशत से ज्यादा हो गया है। खेत में ड़ालने के बाद यूरिया जब विघटित होता है, तो यह नाइट्रस ऑक्साइड़, नाइट्रेट, अमोनिया और अन्य तत्वों में बदल जाता है। नाइट्रस ऑक्साइड हवा में घुल कर स्वास्थ्य के लिए खतरा बन जाती है। इससे सांस की गंभीर बीमारी हो सकती है। यह अम्लीय वर्षा का भी कारण बनती है। यह कार्बन–डाई–ऑक्साइड की अपेक्षा तापमान में 300 गुना तक बढ़ोतरी करती है। ज़मीन में नाइट्रेट व अमोनिया घुलने से पानी प्रदूषित हो जाता है। कृषि रसायनों के अत्यधिक प्रयोग से ज़मीन में मौजूद खेती के लिए लाभदायक बैक्टीरिया व अन्य सूक्ष्म जीवों की क्रियाशीलता पर

भी प्रतिकूल असर पड़ता है। इसके कारण पैदावार में गिरावट के साथ–साथ उत्पादन लागत में भी बढ़ोतरी हो जाती है। इसके अलावा, ज़मीन व भूमिगत जल की गुणवत्ता भी खराब होती जा रही है। यूरिया के अधिक व अनुचित प्रयोग के कारण देश के अनेक भागों के भूजल में नाइट्रेट की मात्रा काफी बढ़ गई है। हरियाणा में यह करीब 99.5 मि.ग्रा. प्रति लीटर पर पहुंच गई है। विश्व स्वास्थ्य संगठन के मानकों के अनुसार इसकी मात्रा 50 मि.ग्रा. प्रति लीटर से ज्यादा नहीं होनी चाहिए। पानी में इसकी मात्रा का ज्यादा होना सेहत के लिए हानिकारक है। लंबे समय से खेती में एक ही तरह के उर्वरकों मुख्यतः यूरिया का प्रयोग करने व जीवांश खादों का कम प्रयोग करने से मृदा में सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे आयरन, जिंक व बोरोन की कमी होती जा रही है। इसका सीधा प्रभाव हमारे स्वास्थ्य पर भी पड़ रहा है। इसी प्रकार देश के अनेक भागों में खेतीबाड़ी में कीटनाशकों के बढ़ते प्रयोग के कारण लोगों में अनेक बीमारियां पनप रही हैं। इन समस्याओं के समाधान हेतु देश में परंपरागत कृषि विकास योजना (पीकेवीवाई) की शुरुआत की गई है। परंपरागत कृषि विकास योजना के तहत मिट्टी की सुरक्षा, कृषि रसायनों के अत्यधिक व अनुचित प्रयोग को कम करने हेतु और लोगों के स्वास्थ्य को सशक्त बनाए रखने के लिए जैविक खेती को बढ़ावा दिया जा रहा है। यह एक सुरक्षित, पर्यावरण हितैषी और टिकाऊ उत्पादन तकनीक है। जैविक खेती से प्राप्त उत्पादों का हमारे स्वास्थ्य पर भी कोई दुष्प्रभाव नहीं होता है।

जैविक खेती की मूलभूत आवश्यकताएं

1. खाद्य सुरक्षा
2. पोषण सुरक्षा
3. मृदा सुरक्षा
4. आजीविका सुरक्षा
5. पर्यावरण सुरक्षा

जैविक खेती के लिए कुछ महत्वपूर्ण टिप्स

बीज का चुनाव

बीज किसी विश्वसनीय या सरकारी संस्थान से लेना बेहतर है जिसे अच्छे बीजों के लिए जाना जाता हो जैसे दिल्ली स्थित पूसा संस्थान या राष्ट्रीय बीज निगम व प्रदेशों में स्थित राज्य कृषि विश्वविद्यालयों आदि से प्राप्त किया जा सकता है। फसलों की प्रजातियों का चुनाव करते समय निम्नलिखित बातों को ध्यान में रखना चाहिए–

1. अपने क्षेत्र के लिए अनुमोदित किस्मों का ही चयन करें।
2. बीज किसी विश्वसनीय और प्रमाणित संस्थाओं से ही प्राप्त करना चाहिए।
3. रोगरोधी और कीट प्रतिरोधी प्रजातियों को ही बोएं।
4. नवीनतम एवं उन्नतशील किस्मों का ही प्रयोग करें।
5. स्थानीय बाजार की मांग तथा साधन सीमा के अनुसार ही किस्मों का चुनाव करें।
6. बीज स्वस्थ, शुद्ध और साफ–सुथरा होना चाहिए।
7. बीज की अंकुरण क्षमता कम से कम 80–90 प्रतिशत अवश्य हो।
8. खेत की मिट्टी और सिंचाई जल की गुणवत्ता को ध्यान में रखकर किस्मों का चुनाव करें।
9. फल व सब्जियां उगाने के लिए संकर बीजों के स्थान पर हमेशा नैचुरल ब्रीडिंग वाले बीज का प्रयोग करना चाहिए। जहां तक हो सके, संकर किस्मों की बुवाई हेतु हमेशा नए बीज का प्रयोग करें।
10. जैविक खेती में पराजीनी फसलों और उनकी प्रजातियों का प्रयोग नहीं किया जाता है।

बीज दर व बीज उपचार

बीज दर की संस्तुत मात्रा पर ही अधिकतम पैदावार मिलती है। अतः बीज दर की संस्तुत मात्रा ही प्रयोग की जानी चाहिए। बुवाई में यह सुनिश्चित करना पड़ेगा कि प्रति इकाई क्षेत्र पौधों की पर्याप्त संख्या हो। पंक्तियों में खाली जगह नही रहनी चाहिए। धान की बासमती प्रजातियों का 10–12 कि.ग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है। मक्के की छोटे दाने वाली प्रजातियों का 18–20 कि.ग्रा, संकुल एवं संकर किस्मों का 20 कि.ग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है। दलहनी फसलों के बीजों को राइज़ोबियम जीवाणु से उपचारित किया जाना अति आवश्यक है। इसके लिए राइज़ोबियम जीवाणु की विशिष्ट प्रजाति का ही चुनाव किया जाना चाहिए। इससे फसल द्वारा वायुमंडलीय नाइट्रोजन की एकत्रीकरण की प्रक्रिया पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। बीज उपचार बुवाई के 10–12 घंटे पहले कर लेना चाहिए। एक हेक्टेयर क्षेत्र में बुवाई करने हेतु राइज़ोबियम जीवाणु के दो पैकेट पर्याप्त होते हैं। ये पैकेट सभी कृषि अनुसंधान संस्थानों व कृषि विश्वविद्यालयों के सूक्ष्मजीव विज्ञान विभागों में प्रायः मुफ्त उपलब्ध हैं। राइज़ोबियम उपचार हेतु एक लीटर पानी में 125 ग्राम गुड़ तथा दो ग्राम गोंद को अच्छी तरह उबाल ले। उसके बाद ठंडा होने पर इस घोल में राइज़ोबियम के दोनों पैकेट मिला दें। इस प्रकार बनी लई को बीज के साथ अच्छी तरह से मिला दें जिससे बीज के चारों ओर लई की महीन परत चढ़ जाए। इसके अलावा, सभी फसलों में फास्फेट की उपलब्धता बढ़ाने हेतु पी.एस.बी. का प्रयोग लाभदायक है। इसके लिए 10 कि.ग्रा. बीज के उपचार हेतु एक पैकेट 200 ग्राम तथा भूमि उपचार हेतु 20 पैकेट 04 कि.ग्रा. कल्चर 40 कि.ग्रा. छनी मिट्टी में मिलाकर प्रयोग करना चाहिए। उपचारित करने के बाद बीज को छाया में सुखा लें। ध्यान रखें कि बीज को कभी भी धूप में न सुखाएं।

जैविक खेती और मिट्टी की गुणवत्ता

जैविक खेती की सफलता खेत की मिट्टी के प्रकार और उसके उपजाऊपन पर निर्भर करती है। यह हमेशा ध्यान रखना चाहिए कि जिस खेत में आप जैविक खेती करना चाहते हैं, उसकी

मिट्टी स्वस्थ व उपजाऊ होनी चाहिए। वर्तमान में फसल अवशेषों को जलाने पर प्रतिबंध है। बदलते परिवेश में यह एक गंभीर समस्या है। इससे पर्यावरण प्रदूषित होने के साथ–साथ इनमें पाए जाने वाले पोषक तत्व भी नष्ट हो जाते हैं। इन्हें कम्पोस्ट या वर्मी कम्पोस्ट में बदलना चाहिए। इसके लिए पूसा संस्थान से ट्रेनिंग ली जा सकती है। फसल अवशेषो को खेत में मिलाने से मृदा और अधिक उपजाऊ हो जाती है। इससे उत्पादन लागत के खर्च पर लगभग दो हजार रुपये प्रति हेक्टेयर तक की बचत की जा सकती है। जैविक उत्पाद के लिए फसल ऐसे खेत में उगाई गई हो, जिसमें कम से कम पिछले दो वर्षों में किसी भी प्रकार के रसायनों या दवा का प्रयोग नहीं किया गया हो।

फसल अवशेषों को जलाने के नुकसान

- फसल अवशेषों को जलाने से प्रदूषण फैलता है।
- जलाने के दौरान निकलने वाली जहरीली गैसों से स्वास्थ्य को हानि पहुंचती है।
- मिट्टी की उर्वराशक्ति में कमी आ जाती है।
- कृषि के उपयोगी कीटों एवं सूक्ष्म जीवों को नुकसान होता है।

जैविक खेती में ह्यूमिक एसिड का महत्व

जैविक खादों के प्रयोग से मृदा में जीवांश की मात्रा बढ़ती है। जैविक पदार्थ जैसे फसल अवशेष, पशुओं का गोबर व मलमूत्र, फसल चक्र में दलहनी फसलों का समावेश, हरी खाद एवं जीवाणु खादों के प्रयोग से मृदा में ह्यूमस की मात्रा में बढ़ोतरी होती है जो मृदा की उर्वराशक्ति को बनाए रखता है। इससे मृदा की जलधारण क्षमता बढ़ती है। साथ ही, मृदा में पोषक तत्वों की मात्रा भी बढ़ती है।

जीवाणु उर्वरकों का प्रयोग

हर फसल के लिए अलग जीवाणु उर्वरकों का प्रयोग करते हैं–

- नाइट्रोजन की आपूर्ति के लिए प्रायः सभी दलहनी फसलों के लिए राइजोबियम जीवाणु की अलग–अलग प्रजातियों का प्रयोग किया जाता है।
- सभी अनाज वाली फसलों, सब्जियों, चारा फसलों और तिलहन फसलों के लिए एजोटोबैक्टर एवं एजोस्पिरिलम जीवाणु उर्वरकों का प्रयोग किया जाता है।
- धान की फसल के लिए अजोला एवं नीलहरित शैवाल का प्रयोग करते हैं।
- सभी फसलों में फॉस्फोरस की आपूर्ति बढ़ाने के लिए माइक्रोफॉस का प्रयोग करते हैं।

अजोला

अजोला धान की फसल में प्रयोग होने वाला प्रमुख जैविक उर्वरक है। इसका मुख्य कारण यह है कि अजोला का मृदा में तेजी से विघटन होता है। साथ ही, इससे काफी मात्रा में नाइट्रोजन फसल को प्राप्त होती है। अजोला में जैव पदार्थ की ऊंची दर होने के साथ ही साथ जैव उत्पादन की दर भी अधिक होती है चूंकि इसकी वृद्धि भी तेजी से होती है। इसके द्वारा उर्वरक उपयोग दक्षता बढ़ने के साथ मृदा के भौतिक, रासायनिक व जैविक गुणों में भी सुधार होता है। अजोला को अपने खेत में प्रयोग के लिए स्वयं भी तैयार किया जा सकता है। इसके लिए खेत को पूर्ण रूप से तैयार कर समतल कर लिया जाता है। अजोला की खेती के लिए 20 मी. लंबी व 02 मी. चौड़ी क्यारी सिंचाई की नाली–सहित बना लेते हैं। फिर इस क्यारी में 10 से.मी. तक पानी भर लेते हैं।

इसके बाद 10 कि.ग्रा. पशु का ताजा गोबर 20 लीटर पानी में घोल कर क्यारी में अच्छी तरह मिला दिया जाता है। उपरोक्त क्यारी में निवेशित करने के लिए विश्वसनीय स्रोत से खरीदा गया 8–10 कि.ग्रा. अजोला पर्याप्त होता है। इसके बाद 100 ग्राम सिंगल सुपर फॉस्फेट 2 से 3 बार में 4 दिन के अंतराल पर क्यारी में प्रयोग किया जाता है। इसके 15 दिन बाद 100–150 कि.ग्रा. अजोला प्रति क्यारी तैयार हो जाता है। अजोला की कुछ मात्रा क्यारी में ही छोड़ दी जाती है जो अगली फसल के लिए निवेश द्रव्य का कार्य करता है।

तरल जैविक उर्वरक

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के पूसा स्थित सूक्ष्म जीव विज्ञान संभाग ने तरल जैविक उर्वरकों का उत्पादन भी शुरू कर दिया है। इनका जीवनकाल एक वर्ष से अधिक है। इनमें जीवाणुओं की उच्च संख्या होती है। साथ ही, इनका भंडारण व प्रयोगविधि बहुत ही आसान है। इनका प्रयोग बुवाई के लिए बीज उपचारित करने, पौधरोपण के लिए जड़ उपचारित करने तथा वृक्षों के लिए मृदा को उपचारित करने के लिए किया जाता है। आजकल निम्न तरल जैविक उर्वरक पूसा संस्थान में उपलब्ध हैं–

- एजोटोबैक्टर–सभी अनाज वाली फसलों व बागवानी फसलों के लिए 15–20 कि.ग्रा. नत्रजन/हेक्टेयर मृदा में उपलब्ध कराता है।
- पोटाश विलायक–सभी फसलों के लिए 5–10 कि.ग्रा. पोटाश/हेक्टेयर उपलब्ध कराता है।
- जिंक विलायक– इसके प्रयोग से सभी फसलों जैसे अनाजों, सब्जियों और फलों में जिंक पोषण में सुधार होता है।

जैविक खादें कहां से खरीदें

जैविक खाद के लिए जैव उत्पादन उपयोग इकाई (बायोमास यूटीलाईजेशन यूनिट) भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012 से 011–25841488 से संपर्क किया जा सकता है। इसके अलावा, क्षेत्रीय मृदा परीक्षण प्रयोगशालाओं, राज्यों में स्थित कृषि विज्ञान केंद्रों से खरीद सकते हैं। साथ ही, इफको, कृभको या किसी अन्य खाद व उर्वरक निर्माता कंपनी के किसान सेवा केंद्रों से संपर्क किया जा सकता है। इसके अलावा, राष्ट्रीय जैविक खेती केंद्र, सेक्टर 19, हापुड़ रोड, कमला नेहरू नगर, गाजियाबाद, उ.प्र.–201002, फोन न. 0120–2764906 व 2764212 से संपर्क किया जा सकता है।

कितनी वर्मी कम्पोस्ट प्रयोग करें

किसी भी अनाज व सब्जी वाली फसलों के लिए प्रथम वर्ष में वर्मी कम्पोस्ट की मात्रा 05 टन प्रति हेक्टेयर प्रयोग करनी चाहिए। इसके बाद, दूसरे वर्ष में इसे कम करके 2.5 टन प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करें। अगले वर्षों में एक टन प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग में लानी चाहिए। बुवाई से पूर्व खेत में कम्पोस्ट खाद बराबर मात्रा में छिटक कर अच्छी तरह से मिट्टी में मिला दें। इसके बाद खेत में रोपाई या बीज की बुवाई करें।

कम्पोस्ट टीके का विकास

बेकार फसल अवशेषों व अन्य कार्बनिक पदार्थों के तेजी से विघटन के लिए इस टीके का विकास किया गया है। यह टीका बहुत से सूक्ष्म जीवों का एक समूह है। कम्पोस्ट के टीके में सैल्यूलोज, हेमी–सेल्यूलोज व लिग्निन का अपघटन करने वाली चार फफूंदी हैं। इस टीके से अपशिष्ट पदार्थों का विघटन तेजी से होता है। परिणामस्वरूप मृदा में पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ जाती है। टीके से उपचारित करने पर धान की पुआल से 90 दिन में एवं सब्जियों व अन्य पौधों की पत्तियों से 45 दिन में अच्छी गुणवत्ता वाली कम्पोस्ट खाद तैयार हो जाती है। जबकि अनुपचारित फसल अवशेषों के अपघटन में कई महीने लग जाते हैं। एक टन फसल अवशेषों के अपघटन के लिए 500 ग्राम टीके का पैकेट पर्याप्त होता है। इससे कम्पोस्ट बनने की प्रक्रिया तेज हो जाती है। इस टीके का हवादार गड्ढों में पानी के साथ प्रयोग किया जाता है जिससे कम्पोस्ट बनाने के लिए प्रयोग किया जाने वाला पदार्थ नमीयुक्त हो जाए।

सारणी 1 : धान के लिए उपयुक्त जैविक उर्वरक एवं उनकी प्रयोग विधि

जैविक उर्वरक	मात्रा प्रति हेक्टेयर	प्रयोग विधि	टिप्पणी
एजोटोबैक्टर	500–800 ग्राम	पौध रोपाई के समय पौधों की जड़ों को जीवाणु उर्वरक से उपचारित किया जा सकता है।	उपचारित पौधों की जड़ों को तेज धूप न लगने दें।
नीलहरित शैवाल	10–15 कि.ग्रा.	रोपाई के एक सप्ताह बाद खड़े पानी में समान रूप से बिखेर दें।	इस बात का ध्यान रखें कि खेत में पानी सूखने न पाए अन्यथा इसकी नत्रजन एकत्रीकरण की क्षमता में कमी आ जाती है।
माइक्रोफोस	500–700 ग्राम	रोपाई करने से पूर्व पौधों की जड़ों को जीवाणु घोल में डुबोकर उपचारित करें।	मिट्टी में पाए जाने वाले फॉस्फोरस की उपलब्धता को बढ़ाता है।
अजोला	एक टन	पौध रोपण से एकदम पहले खेत में अच्छी तरह मिला दें।	मृदा में पर्याप्त नमी बनी रहनी चाहिए।

वर्मी कम्पोस्ट और ग्रामीण युवा रोजगार

फसल अवशेषों को जलाने की समस्या से निपटने के लिए कृषि वैज्ञानिकों ने अनेक उपाय किए हैं जिनमें वर्मी कम्पोस्ट या केंचुआ खाद बनाना महत्वपूर्ण है। इस प्रक्रिया में फसल अवशेषों तथा गोबर का सदुपयोग करके वर्मी कम्पोस्ट तैयार किया जाता है। इससे एक तरफ वायु प्रदूषण की समस्या को नियंत्रित किया जा सकता है। दूसरी तरफ, किसानों को उच्च गुणवत्तायुक्त जैविक खाद उपलब्ध कराई जा सकती है। केंचुओं का कृषि उत्पादन में महत्वपूर्ण योगदान है चूंकि इसकी समस्त जीवन प्रक्रियाएं खेती में उपयोगी हैं। साथ ही, खेती को टिकाऊ बनाने के लिए जैविक खादों की उपयोगिता दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। इस विधि में फसल अवशेषों को एक लंबे ढ़ेर में रखकर केंचुए छोड़ दिए जाते हैं। इस प्रक्रिया के अंर्तगत केंचुए फसल अवशेष व गोबर खाकर अच्छी खाद बना देते हैं जिसे हम वर्मी कम्पोस्ट या केंचुआ खाद कहते हैं। अतः फसल अवशेषो को केंचुओं की सहायता से खाद के रूप में परिवर्तित करना अति आवश्यक है ताकि फसल अवशेषों की समस्या से निपटा जा सके। वर्मी कम्पोस्ट विधि में फसल अवशेषों को खाद में परिवर्तित करके पोषक तत्वों को पुनः उपलब्ध कराया जाता है। इस प्रक्रिया में केंचुएं धीरे–धीरे प्रजननशील होकर संख्या में बढ़ते जाते हैं। इस प्रकार एक से डेढ़ माह में अच्छी गुणवत्ता की वर्मी कम्पोस्ट तैयार हो जाती है जिसे छानकर थैलियों या बोरियों में भर लेते हैं।

भारत में वर्मी कम्पोस्ट बनाने के लिए केंचुओं की केवल दो प्रजातियां आईसीनिया फीटिडा तथा युड्रिलिस युजिनिया अत्यधिक काम में लाई जा रही है। साथ ही, वर्मी कम्पोस्ट द्वारा ग्रामीण युवाओं को स्वरोजगार भी उपलब्ध कराया जा सकता है क्योंकि आज देश के विभिन्न भागों में वर्मी कम्पोस्ट का मूल्य 10 से 15 रुपये प्रति किग्रा. है। वर्मी कम्पोस्ट में 1.40 प्रतिशत नाइट्रोजन, 1.60 प्रतिशत फास्फोरस, 0.47 प्रतिशत पोटेशियम तथा पीएच 6.5 से 7.0 के बीच होता है।

जैविक नियंत्रण

भूमि में बहुत से ऐसे लाभकारी सूक्ष्म जीव पाए जाते हैं जो किसी न किसी प्रकार से रोग पैदा करने वाले रोगजनकों की संख्या एवं क्रियाशीलता को प्रभावित करते हैं जिससे मृदाजनित रोगों के प्रबंधन में मदद मिलती है। इन लाभकारी सूक्ष्म जीवों की संख्या कृत्रिम विधि द्वारा मृदा में बढ़ाना एवं रोगजनक सूक्ष्म जीवों की संख्या एवं क्रियाशीलता को कम करना जैविक नियंत्रण कहलाता है। ट्राइकोडर्मा बिरिडी, ट्राइकोडर्मा हर्जियानम, स्यूडोमोनास फल्युरोसेस, बेसिलस सबटिलिस, बेसिलस एमाइलालिक्यूफेसिएंस आदि जैविक नियंत्रण का प्रयोग बीजोपचार के लिए किया जा सकता है। बीज उपचार के लिए 10 ग्राम जैव नियंत्रण को प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से प्रयोग किया जा सकता है।

जैविक उर्वरकों के प्रयोग में सावधानियां

प्रत्येक फसल के लिए अनुमोदित टीके का उसकी समाप्ति तिथि से पूर्व प्रयोग करें। टीके के पैकेट तथा उपचारित बीजों को सूर्य के प्रकाश, रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशियों के संपर्क में आने से बचाएं। टीके का भंडारण सदैव ठंडे स्थान पर करें व बच्चों की पहुंच से दूर रखें।

गाजर घास का जैविक नियंत्रण

पिछले कई वर्षों से गाजर घास का प्रकोप कृषि क्षेत्रों में बढ़ता ही जा रहा है। यह एक बहुत ही हानिकारक खरपतवार है जो देश के विभिन्न क्षेत्रों में बहुतायत में पाया जाता है। यह घास खेती योग्य उपजाऊ ज़मीन में तेजी से पैर पसार रही है। गाजर घास को विभिन्न क्षेत्रों में अलग–अलग स्थानीय नामों जैसे चटक चांदनी, वाईट टोप, स्टार वीड, कांग्रेस घास, गजरी, पार्थेनियम व गांधी बूटी आदि से भी जाना जाता है। जैविक साधनों द्वारा गाजर घास को नियंत्रित करने के लिए खरपतवार को खाने वाले परजीवी, जीवाणुओं, कीट–पतंगों तथा अनेक प्रकार की वनस्पतियों का प्रयोग किया जाता है। गाजर घास नामक हानिकारक खरपतवार को जाइगोग्रामा बाइकोलोरेटा परजीवी खाकर समाप्त कर देती है। यह कीट भारतीय परिस्थितियों के लिए अनुकूल पाया गया है। पत्ती खाने वाले इस वीटल को मैक्सिको से लाया गया था इसलिए इसको मैक्सिकन बीटल के नाम से जाना जाता है। एक हेक्टेयर क्षेत्र के लिए कम से कम 10–15 हजार मैक्सिकन बीटल छोड़ने चाहिए। इसके लारवा और पौढ़ गाजर घास की पत्तियों को खाकर नष्ट कर देते हैं। यह कीट गाजर घास के पौधों को पत्ती विहीन बना देता है। फलस्वरूप पौधा फूल आने से पहले ही नष्ट हो जाता है। इसके अलावा, फ्यूजेरियम पेली डोरोसियम व स्कलेरोसियम रोल्फ्सीआई नामक कवकों का प्रयोग भी इसको नियंत्रित करने में किया जा सकता है।

जैविक खेती में निमेटोड नियंत्रण

अनाज, दलहन, तिलहन व सब्जियों वाली फसलों में निमेटोड का भी प्रकोप होता है। इसके कारण पौधों की जड़ों में गांठों का निर्माण हो जाता है। परिणामस्वरूप पौधे मृदा से पानी और पोषक तत्वों का अवशोषण आसानी से नहीं कर पाते हैं। सूत्रकृमि (रूटनोट निमेटोड) की रोकथाम के लिए निमेटोड गांठ–रहित शुद्ध बीज का प्रयोग करना चाहिए। धान–गेहूं फसल चक्र के अंतर्गत धान के स्थान पर तिल या अरहर की फसल उगाकर निमेटोड की रोकथाम की जा सकती है। सूत्रकृमि दलहनी फसलों में लगने वाले छिपे शत्रु हैं जो मिट्टी में रहते हैं। यह पौधों की जड़ों पर परजीवी के रूप में रहते हैं। ये जड़ों को संक्रमित कर पौधों को नुकसान पहुंचाते हैं जिसके कारण पैदावार में भारी गिरावट आ जाती है। सूत्रकृमि पौधों की जड़ों से आहार ग्रहण करते हैं। सूत्रकृमि से प्रभावित पौधे पीले पड़ जाते हैं, पत्तियों का आकार छोटा तथा सिकुड़ी हुई, जड़ें ठूंठदार, छोटी, मोटी व गांठदार हो

जाती हैं। सामान्यतः खेत में रोगी पौधे समूह में बिखरे हुए टुकड़ों में दिखाई पड़ते हैं, जो सूत्रकृमि के असमान वितरण के कारण होता है। सूत्रकृमि की रोकथाम के लिए उचित फसल–चक्र अपनाएं। गर्मियों में गहरी जुताई करें, जिससे सूत्रकृमि के अंडे और डिंभक तेज धूप तथा निर्जलीकरण के कारण मर जाएं। बुवाई के तीन सप्ताह पूर्व नीम, अरंडी, महुआ, करंज इत्यादि खलियों की 15–20 क्विंटल मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में बिखेरकर जुताई कर दें। सूत्रकृमि नियंत्रण के लिए दलहनी फसलों की मुख्यतः मटर की रोगरोधी किस्मों जैसे सी 50, ए 70 व बी 58 का प्रयोग भी लाभकारी, प्रभावशाली व उपयोगी पाया गया है।

जैविक खेती के लिए प्रशिक्षण

जैविक खेती के लिए निम्नलिखित केंद्रों में से कहीं भी प्रशिक्षण लिया जा सकता है–

- सस्य विज्ञान संभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012 से 011–25842283 पर संपर्क किया जा सकता है।
- वर्मी कम्पोस्ट बनाने व केंचुओं के बारे में जानकारी के लिए जैव उत्पादन उपयोग इकाई (बायोमास यूटीलाईजेशन यूनिट) भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली–110012 से 011–25841488 पर संपर्क किया जा सकता है।
- जैविक उर्वरकों के बारे में जानकारी व प्रशिक्षण के लिए पूसा संस्थान स्थित सूक्ष्म जीव विज्ञान संभाग 011–24847649 से संपर्क करें।
- राष्ट्रीय जैविक खेती अनुसंधान संस्थान, गंगटोक शहर, सिक्किम।
- राष्ट्रीय जैविक खेती केंद्र, सेक्टर 19, हापुड रोड, कमला नेहरू नगर, गाज़ियाबाद, उ.प्र.–201002, फोन न. 0120–2764906 व 2764212 से संपर्क किया जा सकता है। ई–मेलः nbde@nic.in या केंद्र की वेबसाइट http:/ncof.dacnet.nic.in देखें।
- कृषि एवं प्रसंस्कृरित खाद उत्पाद निर्यात विकास प्राधिकरण नई दिल्ली की वेबसाइट www.apeda.gov.in देखें।
- विस्तार निदेशालय, कृषि एवं किसान कल्याण मंत्रालय, पूसा कैम्पस, नई दिल्ली–110012
- वर्मी कम्पोस्ट बनाने के लिए अपने जिले में स्थित कृषि विज्ञान केंद्रों से केंचुए प्राप्त किए जा सकते हैं।
- अजाला जैविक उर्वरक को तैयार करने के लिए पूसा संस्थान स्थित सूक्ष्म जीव विज्ञान संभाग 011–24847649 से प्रशिक्षण ले सकते हैं जहां से इसकी बिक्री एवं बाजार की जानकारी भी मिल सकती है।

फसलों का चिड़ियों से बचाव

फसलों मुख्यतः मक्का, ज्वार, बाजरा व सूरजमुखी में तोता, मोर, कबूतर व अन्य चिड़ियां पकने के समय नुकसान पहुंचाते हैं। अतः इनसे फसल को बचाना चाहिए। इसके लिए अग्नि रिफ्लेक्टिव फीता का प्रयोग किया जा सकता है। यह एक प्रकार का लाल फीता होता है। फसल में फूल आने की अवस्था पर बांस की खूंटियां में फीता मोड़कर अच्छी तरह से बांध दें। ये खूटियां फसल से एक फुट ऊंची रहनी चाहिए तथा इनका अंतर 15–20 फुट होना चाहिए। इस प्रकार सूर्य उगने के समय पूर्व से तथा सूर्यास्त के समय पश्चिम दिशा से सूर्य की किरणें इन खूंटियों से बंधे रंगीन फीतों पर पड़ती हैं। फीतों की चमक तथा लाल रंग से चिड़ियों को आग का आभास होता है। साथ ही साथ हवा के झोंकों से फीतों के टकराने से आवाज आती है। इस तरह फसल पक्षियों के नुकसान से बच जाती है। एक हेक्टेयर क्षेत्र के लिए लगभग 630 मीटर लंबा फीता पर्याप्त होता है जिसकी बाजार में कीमत लगभग 500–700 रुपये है। यह किसान सेवा केंद्रों पर तथा कीटनाशकों, खाद व बीज विक्रेता के यहां आसानी से मिल जाता है।

(लेखक जल प्रौद्योगिकी केंद्र, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली में कार्यरत हैं।)

ई–मेल : v.kumardhama@gmail.com

जैविक खेती के स्वास्थ्य और पर्यावरणीय लाभ

–निमिष कपूर

जैविक फलों और सब्जियों में फीनोलिक यौगिकों की अधिकता होती है जो रोग की रोकथाम में भूमिका निभाते हैं और कैडमियम कम होता है जोकि किडनी के लिए विषाक्त होता है। जैविक खाद्य पदार्थ शाकनाशकों और कीटनाशकों से मुक्त होते हैं जो विभिन्न प्रकार के कैंसर, प्रतिरक्षा विकार, बांझपन, हृदय रोग, उच्च रक्तचाप और कई अन्य बीमारियों से संबद्ध हैं। जैविक खेती उपभोक्ताओं को पोषक तत्वों से भरपूर विषमुक्त भोजन प्रदान करती है और खेतों में और खेतों के आसपास प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्रों को बढ़ावा देती है।

वर्ल्ड ऑफ आर्गेनिक एग्रीकल्चर रिपोर्ट 2018 के अनुसार, भारत जैविक उत्पादकों की संख्या में विश्व में शीर्ष स्थान पर आ गया है। आज विश्व भर में जैविक कृषि उत्पादों की मांग निरंतर बढ़ती जा रही है जिनमें रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों का प्रयोग या तो नहीं होता है या न्यूनतम होता है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के बगैर या अल्पतम उपयोग करके उत्पादों को जैविक कृषि प्रणाली के तहत उगाया जाता है। जैविक खेती में भूमि की उर्वराशक्ति को बनाए रखने के लिए फसल–चक्र, हरी खाद, कम्पोस्ट आदि का प्रयोग किया जाता है। जैविक खेती में मिट्टी की प्रजनन और पुनर्योजी क्षमता बनी रहती है, पौधों को अच्छा पोषण मिलता है, मिट्टी का प्रबंधन बेहतर रहता है, जीवन–शक्ति से भरपूर पौष्टिक खाद्य उत्पादन होता है, जिसमें रोग–प्रतिरोधक क्षमता होती है। कीटनाशकों और रासायनिक खादों के बेतरतीब प्रयोग से आज स्वास्थ्य और पर्यावरण के लिए बड़ी चुनौतियां खड़ी हो गई हैं, जिसका समाधान केवल जैविक खेती से प्राप्त हो सकता है।

भारत सरकार की हालिया रिपोर्ट के अनुसार, देश के विभिन्न हिस्सों से एकत्र सब्जियों, फलों और अन्य खाद्य पदार्थों में कीटनाशकों के उच्च–स्तर का पता चला है। एक और चौंकाने वाला तथ्य यह है कि भारत में इस्तेमाल किए गए 234 कीटनाशकों में से 24 को कैंसरकारी या कार्सिनोजेनिक के रूप में वर्गीकृत किया गया है। शोध में सामने आया है कि फसलों में लगातार कीटनाशकों, रासायनिक खादों के इस्तेमाल से कैंसर पीड़ित मरीजों की संख्या बढ़ती जा रही है। भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद ने अपने अध्ययन में बताया है कि वर्ष 2020 में देश में कैंसर मरीजों की संख्या में 17 लाख से अधिक का इजाफा होगा। कीटनाशकों के कारण प्रोस्टेट कैंसर बढ़ता जा रहा है। इससे खासकर फेफड़े, किडनी, लिवर और गले को नुकसान पहुंच रहा है।

नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ कैंसर प्रिवेंशन एंड रिसर्च, नोएडा के अनुसार प्रदेश में खाद्य पदार्थों के माध्यम से लोगों के शरीर में रोजाना 0.5 मिलीग्राम कीटनाशक जा रहा है। राजीव गांधी कैंसर इंस्टीट्यूट एंड रिसर्च सेंटर का कहना है कि कीटनाशक तंबाकू के बाद देश में कैंसर का दूसरा बड़ा कारण बन रहे हैं। हिसार कृषि विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों द्वारा किए गए एक सर्वेक्षण के अनुसार अनाजों, सब्जियों, दूध आदि में रासायनिक प्रदूषण की मात्रा खतरनाक–स्तर तक पहुंच चुकी है। रिपोर्ट में बताया गया

है कि सब्जियों में 61 प्रतिशत, फलों में 53 प्रतिशत, मक्खन में 67.4 प्रतिशत, दूध में 52 प्रतिशत, पशुओं के चारे में 81 प्रतिशत और कृषि के लिए इस्तेमाल किए जाने वाले भूजल में 73 प्रतिशत प्रदूषण घुल चुका है।

2017 में 4.9 अरब डॉलर के अनुमानित बाजार के साथ भारत अमेरिका, जापान और चीन के बाद कीटनाशकों का चौथा सबसे बड़ा उत्पादक है। भारत में आज से साठ वर्ष पहले देश में जहां मात्र दो हजार टन कीटनाशक की खपत थी, वहां कीटनाशक उपयोग 2002 में 47,020 टन से बढ़कर 2014 में 60,280 टन हो गया था। आज यह बढ़कर 90 हजार टन तक पहुंच चुका है। कीटनाशकों की घरेलू खपत 2020 तक 6.5 प्रतिशत बढ़ने की उम्मीद है। कीटनाशकों के उपयोग को नियंत्रित करने में विफलता के लिए कीटनाशकों का आयात और अपंजीकृत कीटनाशकों के उपयोग में बढ़ोतरी ज़िम्मेदार हैं, जिसका सीधा असर पर्यावरण और स्वास्थ्य पर होता दिखाई दे रहा है।

वैज्ञानिकों का कहना है कि एक विशिष्ट मानव अपने शरीर में लगभग 500 रसायनों के भार को वहन करता है, जो अधिकतर वसायुक्त ऊतक में जमा होते हैं। कीटनाशक अवशेष हमारे शरीर में जीवन भर के लिए टिके रहते हैं। ये कैंसर और पार्किंसंस जैसी बीमारियों के लिए जोखिम को बढ़ा सकते हैं और शरीर की विभिन्न प्रणालियों को कमजोर कर सकते हैं, जिससे बांझपन, तंत्रिका संबंधी विकार, स्वलीनता (आटिज्म), मधुमेह और जन्म संबंधी दोष हो सकते हैं।

कीटनाशक स्वास्थ्य को खतरा पैदा करने के अलावा मिट्टी, पानी, हवा और अन्य वनस्पतियों को दूषित करते हैं। कीटनाशकों से कीट या खरपतवार तो ख़त्म हो जाते हैं पर पक्षियों, मछलियों, लाभदायक कीटों और अन्य पौधों सहित तमाम जीवों के भोजन को कीटनाशक विषाक्त कर देते हैं। दूसरी ओर, जैविक खेती उपभोक्ताओं को पोषक तत्वों से भरपूर विषमुक्त भोजन प्रदान करती है और खेतों में और खेतों के आसपास प्राकृतिक पारिस्थितिकी तंत्रों को बढ़ावा देती है। जैविक खेती के बहुआयामी लाभ हैं। आज एक ओर जहां भारत में कीटनाशकों और रासायनिक उर्वरकों के घातक परिणाम सामने आ रहे हैं, वहीं दूसरी ओर, भारत जैविक उत्पादकों के क्षेत्र में विश्व में नंबर एक होने का गौरव भी हासिल कर चुका है। ये विरोधाभासी है परंतु सत्य है।

स्वास्थ्य और पर्यावरण के लिए बेहतर

कृषि उत्पादन के तरीकों की व्यापक पद्धति में शामिल जैविक खेती पर्यावरण के लिए सहायक है। जैविक खेती में क्षेत्रीय दशाओं के अंतर्गत स्थानीय तौर पर अनुकूलित प्रणालियों के प्रयोग को प्राथमिकता दी जाती है। जैविक कृषि तंत्र में किसी भी विशिष्ट कार्य को पूरा करने के लिए (जैसे कीड़ों से बचाव, पौधे की वृद्धि) कृत्रिम सामग्री का उपयोग करने के विपरीत, जहां तक संभव हो, जैविक तरीकों का उपयोग करके पूरा किया जाता है। सामान्यतः पारंपरिक कृषि स्थानीय दशाओं में अधिकतम उपज के लिए रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशकों आदि का उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित करती है। जबकि यह साबित हो चुका है कि पारंपरिक खाद्य पदार्थों की तुलना में जैविक खाद्य पदार्थों का स्वाद बेहतर होता है। इनमें पोषण की गुणवत्ता और गुणवत्ता को टिकाऊ बनाए रखने का गुण भी अधिक होता है। मानव स्वास्थ्य पर जैविक खाद्य के प्रभावों की जांच कर रहे अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि नियमित जैविक भोजन के सेवन से बचपन में एलर्जी, वजन बढ़ना, मोटापा और कुछ प्रकार के कैंसर का जोखिम कम हो सकता है।

जैविक फलों और सब्जियों में फ़ीनोलिक यौगिकों की अधिकता होती है जो रोग की रोकथाम में भूमिका निभाते हैं और कैडमियम कम होता है जोकि किडनी के लिए विषाक्त होता है। जैविक खाद्य पदार्थ शाकनाशकों और कीटनाशकों से मुक्त होते हैं जो विभिन्न प्रकार के कैंसर, प्रतिरक्षा विकार, बांझपन, हृदय रोग, उच्च रक्तचाप और कई अन्य बीमारियों से संबद्ध हैं।

पर्यावरण और जैव विविधता को बढ़ावा

जैविक खेती खेतों पर पाए जाने वाली जंगली प्रजातियों के लिए भोजन और आश्रय प्रदान करके पर्यावरण और जैव विविधता का संरक्षण करती है। इस प्रकार जीव संख्या और विविधता में बढ़ोतरी होती है। जैविक खेती उच्च–स्तर की कृषि–जैव विविधता की पोषक है, जिसमें कि मिट्टी और मिट्टी के जीवों जैसे केंचुओं और कीटों के प्राकृतिक शत्रुओं और मधुमक्खियों का पोषण होता है। जल प्रदूषण के जोखिम को कम करने के साथ ही कृत्रिम उर्वरकों की मांग कम हो जाती है। जैविक खेती से संकटग्रस्त जंगली जैव–विविधता और पारिस्थितिकी–तंत्रों का पोषण होता है क्योंकि यह प्रति इकाई कृषि क्षेत्रफल से पोषक तत्वों के क्षरण को कम करती है जिसमें नाइट्रोजन निक्षालन, नाइट्रस ऑक्साइड उत्सर्जन और अमोनिया उत्सर्जन शामिल हैं।

जैविक खेती की मुख्य अल्पीकरण या शमन क्षमता टिकाऊ कृषि को नियोजित करके कार्बनिक पदार्थों के निर्माण के माध्यम से कार्बन–डाई–ऑक्साइड को पृथक करने के लिए कृषि भूमि की क्षमता में निहित है। इसके कृषि प्रणाली के उदाहरणों में – जैविक खादों और फसल–चक्र का उपयोग शामिल है जिसमें फलीदार पौधे और भूमिसस्य संरक्षण आता है। कृषि अपशिष्ट को खुले में न जलाने, कृत्रिम उर्वरकों से बचने और जीवाश्म ईंधन से संबंधित उत्पादन उत्सर्जन को कम करके भी अल्पीकरण को प्राप्त किया जा सकता है।

सामान्य जैविक कृषि पद्धतियों का भी अनुकूलन में विशेष योगदान होता है। मिट्टी में जैविक पदार्थ के निर्माण से मिट्टी की जल प्रतिधारण क्षमता बढ़ती है और मिट्टी अधिक उपजाऊ बनती है। इस प्रकार सूखा, अत्यधिक वर्षा की घटनाओं, बाढ़ और जल–जमाव की संवदेनशीलता कम होती है। जैविक खेत में विकसित कृषि पारिस्थितिकी विविधता, कम नाइट्रोजन इनपुट और रासायनिक कीटनाशकों की अनुपस्थिति के कारण अनुकूलन को प्रोत्साहित करती है। मौसम की चरम घटनाओं से जुड़े उत्पादन

जैविक खेती की सफलता की कहानियां

केरल एक ऐसा राज्य है जहां हाल के वर्षों में उच्चस्तरीय जैविक खेती को बढ़ावा दिया जा रहा है। प्रति व्यक्ति निम्न जोत या भूमि धारण वाला राज्य होने के नाते, केरल खाद्य वस्तुओं के लिए पड़ोसी राज्यों पर अत्यधिक निर्भर रहता है, खासकर सब्जियों के लिए। केरल ने जैविक खेती को स्थाई, पुरस्कृत और प्रतिस्पर्धी बनाने और हर नागरिक के लिए जहर–मुक्त पानी, मिट्टी और भोजन सुनिश्चित करने के लिए एक जैविक नीति तैयार की थी। परिणामस्वरूप केरल में कई किसानों और किसान समूहों ने जैविक कृषि को एक लाभदायक उद्यम के रूप में अपनाया है।

केरल के मन्नारकड, कन्जिरापुज्हा के किसान

थॉमस मैथ्यू के पास पल्लकड, केरल के अट्टापदी क्षेत्र में 10 एकड़ में फैला एक खेत है, जहां ड्रिप सिंचाई को अपनाया गया है। इस प्रमाणित जैविक खेत में भारतीय जैविक प्रमाणीकरण के साथ ही यूएसडीए जैविक प्रमाणपत्र भी प्राप्त है। थॉमस यहां नारियल, आम, सपोटा, भारतीय करौदा और कटहल उगाते हैं।

थॉमस के जैविक खेत में उगने वाले औषधीय पौधों के "कोताक्कल आयुर्वेदशाला" में रस निष्कर्षण के बाद बचे अपशिष्ट पदार्थ को एकत्र किया जाता है। अपशिष्ट में गोबर मिलाकर और वर्मी कम्पोस्ट विधि से बेहतर गुणवत्ता की खाद बनाई जाती है। जैविक फलों को निकट के बाज़ारों में पिक–अप वैन में भरकर बिक्री के लिए भेजा जाता है। सूखे फलों और जूस आदि को जैविक ब्रांडिंग के साथ बाज़ार तक पहुंचाया जाता है। नारियल तेल को भी जैविक ब्रांडिंग के साथ स्थानीय जैविक किसानों के कोआपरेटिव उद्यम "इंडियन आर्गेनिक फार्मर्स प्रोड्यूसर कंपनी" द्वारा वितरित किया जाता है। इस प्रकार यह जैविक किसान एक वर्ष में 30 से 40 लाख रुपये का शुद्ध लाभ कमाता है। थॉमस मैथ्यू ने फ्रीजर वैन का उपयोग करके अपने जैविक उत्पाद को दूर के बाजारों में बेचने की योजना भी बनाई है।

केरल में वायनाड के किसान

26 वर्षीय किसान सूरज ने कृषि में स्नात्तक होने के बाद व्यावसायिक रूप में जैविक खेती की है। शून्य बजट प्राकृतिक खेती के प्रवर्तक सुभाष पालेकर से प्रेरित, सूरज ने 15 साल की उम्र में एक शौक के रूप में खेती शुरू की थी, लेकिन अब यह उसके लिए एक बड़ा जुनून बन गया है।

सूरज अपनी 5.5 एकड़ भूमि और 5 एकड़ पट्टे की भूमि में विभिन्न फसलों की खेती करते हैं। वह केरल–तमिलनाडु सीमा पर स्थित अपने खेत में गोभी, करेला, बैंगन, टमाटर, शिमला मिर्च, सेम, हरी मिर्च, अरबी, केले, गाजर, चुकंदर और आलू सहित कई सब्जियों की खेती करते हैं। उनके खेत में लगभग 60 प्रकार के औषधीय पौधों के अलावा फलों की लगभग 50 किस्में भी हैं जिनमें रंबूटान, पैशन फ्रूट, मैंगोस्टीन और संतरे शामिल हैं। 2013 के दौरान, उन्हें केरल में सबसे युवा जैविक किसान के रूप में मान्यता मिली और 2014 के दौरान, केरल सरकार ने उन्हें जैविक खेती का ब्रांड एंबेसेडर बनाया। "जीवामृत" के अलावा, सूरज पंचगव्य और गनपजला जैसी वृक्षार्युवैदिक खादों का उपयोग करते हैं। उनका खेत इंडियन आर्गेनिक सर्टिफिकेशन एजेंसी द्वारा जैविक खेत के रूप में प्रमाणित है। सूरज अपने जैविक उत्पाद 30 प्रतिशत अधिक कीमत पर लुलु हाइपर मार्किट जैसी प्रमुख बाजार एजेंसियों के माध्यम से बेचते हैं। वह खेती से प्रतिवर्ष 50 लाख तक कमा सकते हैं।

शीला बशीर, नवयिकुलम, त्रिवेंद्रम, केरल

शीला बशीर केरल राज्य में सर्वश्रेष्ठ महिला किसान पुरस्कार की विजेता हैं। उनकी जैविक खेती के प्रयोग चट्टानों से भरी एक हेक्टेयर ऊंची भूमि में फैले हुए हैं। शीला ने पथरीली ज़मीन को एक आदर्श खेत में बदल दिया है, जिसमें उनकी मेहनत और जैविक खेती की प्रभावी रणनीतियां शामिल हैं। शीला अपने खेत में ऊंची भूमि में उगाए जाने वाले चावल की खेती करती हैं और उसे बेहतरी से बाज़ार में बेचती भी हैं। अन्य फसलों में दो प्रकार की लौकी, कई प्रकार की मिर्च, मूंगफली, बाजरा आदि शामिल हैं। ग्लिरिसीडिया को खेत की सीमा पर लगाया जाता है। केला, अनानास, पैशन फ्रूट आदि की भी खेती की जाती है।

शीला ने पूर्ण जैविक खेती अपनाई है। गोबर और उसके अपने खेत से जैविक खाद, वर्मी कम्पोस्ट, फार्मयार्ड खाद आदि का उपयोग खाद बनाने के लिए किया जाता है। नीम के तेल और जल द्वारा तनुकृत कपूर के मिश्रण को कीट प्रबंधन के लिए छिड़का जाता है। जैव कीटनाशक, जाल आदि भी यहां प्रभावी रूप से उपयोग किए जाते हैं। शीला ने अपने खेत में 9 गायों वाली एक डेयरी इकाई भी बनाई है। उनके खेत में 2000 ब्रायलर चूज़े, बत्तख, जापानी बटेर आदि भी हैं। सब्जी की खेती के साथ मधुमक्खी पालन को भी एकीकृत किया जाता है। कृषि संबंधी सभी सामान उनके खेत से ही बेचा जाता है और पंचायत में इको–शॉप का संचालन होता है। राज्य कृषि विभाग द्वारा उनके खेत को गुड एग्रीकल्चरल प्रैक्टिसेज के प्रमाणपत्र से सम्मानित किया गया है। शीला जैविक कृषि में संलग्न एक महिला समूह का नेतृत्व करती हैं। शीला प्रतिवर्ष जैविक खेती से करीब 10 लाख का लाभ अर्जित करती हैं।

भारतीय जैविक उत्पादों का बढ़ता वैश्विक बाजार

वर्ल्ड ऑफ आर्गेनिक एग्रीकल्चर रिपोर्ट 2018 के अनुसार, भारत जैविक उत्पादकों की संख्या में विश्व में नंबर एक है और जैविक कृषि भूमि के मामले में भारत विश्व में नौवें स्थान पर है (स्रोतः एफ.आई.बी.एल. और दि इंटरनेशनल फेडरेशन ऑफ आर्गेनिक एग्रीकल्चर मूवमेंट्स – वर्ष 2018)। 10.92 लाख प्रमाणित जैविक उत्पादकों के साथ, भारत दुनिया के कुल जैविक उत्पादकों (27 लाख) के 30 प्रतिशत से अधिक का आश्रय–स्थल है। हालांकि, जब प्रमाणित जैविक खेती के तहत क्षेत्र का सवाल है, तो जैविक खेती में भारत कुल क्षेत्रफल (5.78 करोड़ हेक्टेयर) का केवल 7 प्रतिशत (44 लाख हेक्टेयर) ही योगदान देता है। भारत में प्रमाणित जैविक उत्पादों के लगभग 17 लाख मीट्रिक टन (2017–18) का उत्पादन किया गया है, जिसमें खाद्य उत्पादों की सभी किस्में शामिल हैं।

जोखिमों को कम करने के लिए जैविक कृषि की कम लागत के साथ उच्च विविधता भी महत्वपूर्ण है। जैविक रूप से प्रबंधित मिट्टी में मिट्टी के क्षरण का मुकाबला करने की अनूठी क्षमता होती है क्योंकि ये जल तनाव से लेकर पोषण तत्वों के नुकसान तक के लिए अनुकूलित होती है। खाद्य और कृषि संगठन (एफ.ए.ओ.) के अनुसार, जैविक कृषि न केवल पारिस्थितिकी–तंत्र को जलवायु परिवर्तन के प्रभावों को बेहतर ढंग से समायोजित करने में सक्षम बनाती है, बल्कि कृषि संबंधी विषाक्त ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन को कम करने की एक बड़ी क्षमता का सृजन करती है।

इसके अतिरिक्त, मिश्रित खेती और जैविक फसल–चक्र की विविधता मिट्टी की ऊपरी मुलायम सतह को संरक्षण देती है और जैविक पदार्थ के पुनर्निर्माण से जलवायु परिवर्तन का भी मुकाबला कर सकती है। क्योटो प्रोटोकॉल के कार्बन ह्रास के विचार को आंशिक रूप से जैविक खेती से पूरा किया जा सकता है।

जैविक खेती की प्राचीन पद्धतियां – वृक्षायुर्वेदिक कृषि एवं प्राकृतिक खेती

कृषि विशेषज्ञ श्री जी.एस.उन्नीकृष्णन नायर बताते हैं कि भारत में जैविक खेती के अंतर्गत दो पद्धतियां विख्यात रही हैं, जिनमें पालेकर कृषि या शून्य बजट वाली प्राकृतिक खेती और वृक्षायुर्वेदिक कृषि शामिल हैं। वृक्षायुर्वेदिक कृषि पौधों के स्वास्थ्य, चिकित्सा और उत्पादकता को बनाए रखने की कला है। वृक्षायुर्वेदिक कृषि देश की हजारों वर्ष प्राचीन कृषि एवं चिकित्सा पद्धतियों में शामिल रही है, जिसे आयुर्वेद के प्राचीन विद्वानों द्वारा कृषि, औषधीय पौधों के संवर्धन और बागवानी जैसे विभिन्न क्षेत्रों में प्रयोग किया जाता था।

वृक्षायुर्वेद में जिन प्रमुख विषयों पर चर्चा की गई है, वे हैं भूमि निरूपानम (मिट्टी और मृदा संरक्षण तकनीकों की पहचान और वर्गीकरण), बीजोपति विधि (विभिन्न बुवाई तकनीक), पादप विवाक्षा (संचरण की विधि), रोपण विधानम (रोपण तकनीक), निषेचन विधि (सिंचाई के लिए नियम), पोषण विधि (पोषण देखभाल और प्रबंधन), दृमरक्षा (पौधा संरक्षण), पौधों की बीमारियों के निदान के लिए अपनाए जाने वाले मानदंड, तरुचिकित्सा (वृक्षीय औषधियां एवं जैविक नियंत्रण व उपचार), निवासा सन्ना थारु शुभ–अशुभ लक्षण (पौधों की वासभूमि के लिए चयन, जिसमें शुभ यानी सकारात्मक ऊर्जा और अशुभ यानी नकारात्मक ऊर्जा को आधार बनाया जाता है), तरुमहिमा (वृक्ष की महिमा/जागरूकता सृजन), उपवन प्रक्रिया (भूदृश्य निर्माण/बागवानी), चित्रिकरणम (प्राचीन जैव–तकनीकी हस्तक्षेप)।

वृक्षायुर्वेद में पौधों की सुरक्षा की मूल अवधारणा यह है कि पौधों और मनुष्यों में बीमारी कमोबेश समान कारणों से हुई है। मानव शरीर के कार्यों को नियंत्रित करने वाले तीन कारकों या त्रिदोषों– पवन या वात, पित्त और कफ का असंतुलन खराब स्वास्थ्य के लिए ज़िम्मेदार है। यद्यपि प्राचीन समय में पाए जाने वाले कीटों की किस्में काफी कम थीं, लेकिन वृक्षायुर्वेद के तरीके और उपाय हमेशा की तरह प्रासंगिक हैं क्योंकि वे पौधे के स्वास्थ्य में सुधार और प्रतिरक्षा का निर्माण करते हैं। वृक्षायुर्वेद के प्राचीन ग्रंथों में, मिट्टी को पोषक तत्वों के साथ समृद्ध करने की सिफारिश की गई है ताकि कीटों और रोग पर बहुतायत से हमला किया जा सके और मिट्टी में उपयोगी सूक्ष्मजीव गतिविधियां होने से उनका नियंत्रण और निष्कासन किया जा सके। वृक्षायुर्वेद में वर्णित कई प्रक्रियाओं का आज किसान व्यापक रूप से उपयोग करते हैं और इसके उत्कृष्ट परिणाम मिलते हैं। इन प्रक्रियाओं में कुनापजला, पंचगव्य, वानस्पतिक कीट निरोधक, धूमक, पौधे की वृद्धि व फूलों के उत्तेजक इत्यादि। आज पंचगव्य पर आई.आई.टी., दिल्ली में शोध किया जा रहा है और इसके व्यापक पैमाने पर प्रयोग की तैयारी है।

प्राकृतिक खेती भी जैविक खेती का एक प्राचीन रूप है। भारत में लाखों लोग हैं, जो प्राकृतिक खेती के विभिन्न रूपों को अपनाते हैं। पालेकर प्राकृतिक खेती के अनुसार 30 एकड़ भूमि पर, एक देसी गाय पर्याप्त है। इसका गोबर और मूत्र प्राकृतिक खेती में सहायक है। यदि हम खेत पर एक ग्राम गोबर का उपयोग कर रहे हैं, तो हम न्यूनतम 3000 मिलियन फायदेमंद और प्रभावी सूक्ष्म जीवों को समाविष्ट करा रहे हैं, जो पौधों की प्राकृतिक वृद्धि में मदद करते हैं। प्राकृतिक खेती शून्य बजट खेती, प्राकृतिक आदानों, अधसड़ी घास और बहु–फसल के सिद्धांतों पर आधारित है।

जैविक उत्पादों के स्वास्थ्य एवं पर्यावरणीय लाभों को देखते हुए आज आवश्यकता है कि देश के सभी जिलों में स्थित कृषि विज्ञान केंद्रों में जैविक खेती के प्रोत्साहन के लिए व्यापक नीति बनाई जाए और किसानों के जैविक उत्पाद को बाज़ार तक पहुंचाने में उपलब्ध मानकों के अनुरूप हर संभव सहायता उपलब्ध कराई जाए।

(लेखक विज्ञान प्रसार, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग, भारत सरकार में वैज्ञानिक 'ई' हैं एवं राष्ट्रीय विज्ञान संचार कार्यक्रमों में संलग्न हैं।)

ई–मेलः nimish2047@gmail.com

जैविक खेती द्वारा खाद्यान्न फसलों का रोग प्रबंधन

–डॉ. दीबा कामिल एवं अंजली कुमारी

पिछले तीन दशकों में खाद्यान्न उत्पादन के नए आयाम बने; साथ ही, पौधों में बीमारियों में भी वृद्धि हुई है। पादप रोग का महत्व उनके द्वारा होने वाली हानियों के कारण बहुत बढ़ गया है। रोगों द्वारा हानि खेत से भंडारण तक अथवा बीज बोने से लेकर फसल काटने के बीच किसी भी समय हो सकती है। पादप रोगों की पहचान उनके लक्षणों के माध्यम से की जा सकती है और उन्हें समय पर नियंत्रित किया जा सकता है।

भारत एक कृषि प्रधान देश है जिसमें 70 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर जीवनयापन करती है। हरितक्रांति के साथ हमने खाद्यान्न में आत्मनिर्भरता प्राप्त कर ली है। लेकिन उर्वरकों का प्रयोग आठ गुना एवं पेस्टीसाइड्स का उपयोग 250 गुना से अधिक बढ़ा है। संपूर्ण विश्व में बढ़ती हुई जनसंख्या एक गंभीर समस्या है। पिछले 45 वर्षों में बढ़ती हुई जनसंख्या के साथ–साथ भोजन की आपूर्ति के लिए मानव द्वारा खाद्य उत्पादन की होड़ में अधिक से अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए तरह–तरह की रासायनिक खादों, जहरीले कीटनाशकों का प्रयोग पारिस्थितिकी तंत्र– प्रकृति के जैविक और अजैविक पदार्थों के बीच आदान–प्रदान के चक्रों को प्रभावित करता है, जिससे भूमि की उर्वराशक्ति खराब हो जाती है, साथ ही वातावरण प्रदूषित होता है तथा मनुष्य के स्वास्थ्य में गिरावट आती है। अतः विश्व का ध्यान प्राकृतिक संतुलन को बनाए रखने वाली कृषि पद्वति की ओर गया है। इस पद्वति को जैविक खेती कहते हैं जिसका सीधा संबंध सूक्ष्म–जीव जंतु से है। अतः प्राकृतिक तरीके से, बिना रसायनिक पदार्थों के उपयोग द्वारा की गई खेती तथा जो भूमि की उर्वराशक्ति को बनाए रखने के लिए फसल चक्र, हरी खाद, कम्पोस्ट आदि के प्रयोग द्वारा की जाती है, उसे जैविक खेती कहते हैं।

जैविक खेती क्यों

पारंपरिक खेती में अत्याधिक रसायनिक उर्वरकों के उपयोग तथा कीटनाशकों के प्रयोग के कारण वर्तमान में खाद्य आवश्यकता की पूर्ति तो हुई परंतु बहुत–सी अनदेखी समस्याएं भी खड़ी हुई जैसे कि कृषि उत्पादन में आ रहे कीटनाशक और फर्टिलाइजर से खेती को लगातार नुकसान होता जा रहा है जिसके कारणवश उससे कई बीमारियो उत्पन्न हुई हैं, जो हमारे स्वास्थ्य के लिए बहुत हानिकारक हैं।

कृषि उत्पादन में तकनीकी स्थिरता का आना व आसपास के पर्यावरण में मित्र एवं परभक्षी कीटों, मकोड़ों, पक्षियों, व मेंढकों की संख्या में कमी के साथ–साथ जैविक विविधता में कमी तथा

वर्तमान में अनेक कृषि उत्पादित फसलों में से हम अपना मुख्य भोजन केवल तीन मुख्य फसलों (गेहूं, चावल, मक्का) से ही प्राप्त करते हैं जिसके कारण हमें सूक्ष्म तत्वों के लिए दवाओं पर निर्भर रहना पड़ रहा है।

मृदा में कार्बन की कमी के कारण निरंतर पैदावार में गिरावट व निरंतर कृषि योग्य भूमि की हानि होती है। कुछ दिनों में पंजाब के कुछ क्षेत्रों में जैविक कार्बन का स्तर 0.2 प्रतिशत तक गिरा है।

प्राकृतिक साधनों जैसेकि जल का दुरूपयोग व रसायनिक प्रदूषण फैलता है। डब्ल्यूटीओ के अनुसार प्रतिवर्ष लगभग 7,50,000 लोग पानी में कीटनाशकों के कारण होने वाले जहर के कारण बीमार होते हैं जिनमें से 14,000 के लगभग लोगों की मृत्यु हो जाती है एवं लागत बढ़ने व दूषित पैदावार के कारण किसानों की आय में कमी आ जाती है।

प्रकृति पृथ्वी पर सदैव ही जैव–संतुलन बनाए रखने का प्रयास करती है, परन्तु मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु इस संतुलन को प्रायः नष्ट करने पर उतारू दिखाई देता है। पिछले तीन दशकों में बढ़ती जनसंख्या का पेट भरने के लिए खाद्यान्न उत्पादन के नए आयाम बने साथ ही, पौधों में बीमारियों में भी वृद्धि हुई है। पादप रोग का महत्व, उनके द्वारा होने वाली हानियों के कारण बहुत बढ़ गया है। रोगों द्वारा हानि खेत से भंडारण तक अथवा बीज बोने से लेकर फसल काटने के बीच किसी भी समय हो सकती है। पौधे के जीवनकाल में बीज सड़न, आर्द्रमारी, बाल पौध झुलसा, तनासड़न, पर्णझुलसा, पर्ण–दाग, पुष्पझुलसा तथा फल सड़न व्याधियां उत्पन्न होती हैं। पादप रोगों की पहचान उनके लक्षणों के माध्यम से की जा सकती है और उन्हें समय पर नियंत्रित किया जा सकता है।

धान के रोग

1) बासमती धान प्रध्वंश (ब्लास्ट)

यह रोग मेग्नापोरथि ओराइजी नामक फफूंद के कारण होता है।

लक्षण– पत्तियों पर भूरे रंग के आंख या नाव जैसे धब्बे बनते हैं जो बाद में राख जैसी स्लेटी रंग की हो जाती है। गांठ प्रध्वंश संक्रमण में गांठ काली होकर टूट जाती है।

2) आच्छद झुलसा

यह रोग राइजोक्टोनिया सोलेनी नामक फफूंद के कारण होता है।

लक्षण– इस रोग द्वारा गोलाकार अथवा अंडाकार हरापन लिए सलेटी रंग के क्षत उत्पन्न होते हैं। कभी–कभी ये क्षत पत्तियों तक पहुंच जाते हैं। यह क्षत धान में हौजियां बनने की अवस्था में उत्पन्न होते हैं।

3) बकानी

यह रोग फ्यूजेरियम फ्यूजीकूराई नामक फफूंद के कारण होता है।

लक्षण– यह रोग नर्सरी एवं खड़ी फसल में देखा जा सकता है। रोग से प्रभावित पौधा हल्का पीलापन लिए हरे रंग का कमजोर एवं असामान्य रूप–सा होता है। संक्रमित पौधे स्वस्थ पौधों की अपेक्षा अधिक लंबे होते हैं। प्रायः ये दाने बनने से पहले ही मर जाते हैं।

4) अभासी कंड

यह रोग अस्टीलेजीनोइडिया वायरस नामक फफूंद के कारण होता है।

लक्षण– प्रत्येक बाली के प्रायः बहुत थोड़े या कभी–कभी अनेक दाने इस रोग से प्रभावित हो सकते हैं। रोगग्रस्त दाने बीजाणुओं में परिवर्तित हो जाते हैं जो बाहर से हरापन लिए एवं अंदर से पीलापन लिए नारंगी रंग के होते हैं और अंततः काले पड़ जाते हैं। ये सामान्य दानों के तुलना में लगभग दो गुना परिमाण के होते हैं।

गेहूं के रोग

गेहूं में लगने वाले तीन गेरुए

1. काला गेरुआ

लक्षण– तने और पत्तियों पर गहरे लाल रंग के बड़े धब्बे बनते हैं।

2. भूरा गेरुआ

लक्षण– पत्तियों पर छोटे नारंगी रंग के धब्बे बनते हैं।

3. पीला गेरुआ

लक्षण– पत्तियों एवं पर्णच्छद पर पतले पीले रंग की धारियां बनती हैं।

2) करनाल बंट

यह रोग टिलेसिया इंडिका नामक फफूंद के कारण होता है।

लक्षण– गेहूं के दाने पर आंशिक रूप से संक्रमण जो काले पाउडर के रूप में टीलियोस्पोर पैदा करते हैं। संक्रमित गेहूं के बीज से सड़ी हुई मछली की बदबू आती है जो ट्राईमियाइल अमीन की वजह से होती है।

3) स्पॉट ब्लॉच या झुलसा रोग

यह रोग बाइपोलेरिस सोरोकिनिआना नामक फफूंद के कारण होता है।

लक्षण– हल्के भूरे रंग के धब्बे जो बाद में परस्पर मिलकर बड़े–बड़े धब्बे बनाते हैं।

4) कंडवा रोग

लक्षण– संपूर्ण पुष्पक्रम, कवक के कलेमाइडोस्पोर्स से बने काले पाउडर में परिवर्तित हो जाता है।

मक्का के रोग

1) मेडिस पर्ण अंगमारी

यह रोग बाईपोलेरिस मेडिस नामक फफूंद के कारण होता है।

लक्षण – इस रोग में पत्तियों की शिराओं के अंडाकार, भूरे या कत्थई रंग के धब्बे उत्पन्न हो जाते हैं। रोग की उग्रावस्था में धब्बे

आपस में मिलकर पत्तियों को झुलसा देते हैं।

2) धारीदार पर्ण एवं पर्णच्छद अंगमारी

यह रोग राइजोक्टोनिया सोलेनाई उपजाति ससाकी नामक फफूंद के कारण होता है।

लक्षण– बीमारी के लक्षण सर्वप्रथम नीचे के पत्तों एवं पर्णच्छद के ऊपर अनियमित आकार के जलसिक्त धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं। विकसित भुट्टा पूरी तरह नष्ट हो जाता है और अपरिपक्व स्थिति में सूख जाता है।

3) चारकोल विगलन

यह रोग मैक्रोफोमिना फेसिओलिना नामक फफूंद के कारण होता है।

लक्षण– यह रोग पुष्पन अवधि के 1–2 सप्ताह के उपरांत दिखाई देता है। प्रभावित पौधा अपरिपक्व स्थिति में सूख जाता है। तने की निचली पोरियों की छाल पर काले बिंदु जैसा स्क्लेरोशिया दिखाई देता है।

4) पीथियम तथा विगलन

यह रोग पीथियम अफैनीडर्मेट्म नामक फफूंद के कारण होता है।

लक्षण– पीथियम तना विगलन पुष्पन से पहले शुरू होता है। रोगग्रस्त क्षेत्र भूरा, जलसिक्त तथा मुलायम होकर टूट जाता है। प्रभावित पौधा ऐंठकर गिर जाता है किन्तु संवहन उत्तकों के अछूते रहने के कारण कई सप्ताह तक हरा रहता है।

जैविक खेती द्वारा पादप रोग प्रबंधन

- रोगों के प्रकोप से बचने से लिए फसल एवं क्षेत्र के अनुसार समय पर बुवाई करनी चाहिए।
- खरपतवार नियंत्रण हेतु गर्मी की जुताई तथा खरपतवार के अंकुरण के बाद पुनः जुताई कर बुवाई करनी चाहिए। इससे खेत में खरपतवार का प्रकोप कम होता है।
- रोगों की प्रतिरोधी किस्मों का प्रयोग करना चाहिए।
- कतार में बुआई करें तथा खरपतवार नियंत्रण हेतु कतार में चलने वाले या हस्तचालित कृषि यंत्रों का उपयोग करना चाहिए।
- यदि कोई प्रबंध नहीं किया गया है तो खरपतवार फसल के पौधों के साथ प्रतिस्पर्धा करके अलग–अलग फसलों की उपज में 5 प्रतिशत से लेकर 50 प्रतिशत तक कमी कर सकते हैं।
- फसल–चक्र में दलहनी फसलों का चुनाव अवश्य करें, जिससे भूमि की उर्वराशक्ति तथा संरचना बनी रहे।
- रोगों की रोकथाम के लिए स्वच्छता रखकर उस पर नियंत्रण करना चाहिए।
- कम से कम दो वर्ष में एक बार हरी खाद का समावेश हो। हरी खाद लेने से पौधों को नत्रजन, सल्फर तथा पोटाश मिलता है।
- खेतों में बहुत से फायदेमंद कीड़े–मकोड़े, पक्षी परभक्षी, परजीवी आदि पाए जाते हैं। रासायनिक कीटनाशकों से उनकी संख्या में विपरीत प्रभाव पड़ता है। अतः फायदेमंद जीव–जंतु को खेतों में बढ़ने को मौका दें, जिससे प्राकृतिक रूप से कीटों पर नियंत्रण पाया जा सके।
- पशुओं के चारे की व्यवस्था अपने खेत में ही करें और उनके

गोबर, मलमूत्र, व अपशिष्ट पदार्थों से कम्पोस्ट खाद बनाना चाहिए।

- ट्राइकोडर्मा व अन्य बायो–पेस्टीसाइड अच्छी सड़ी हुई खाद में मिलाकर प्रयोग किए जाएं तो अधिक पैदावार होती है एवं यह पादप रोग प्रबंधन में भी उपयोगी है।
- नीम, करंजा, महुआ, मूंगफली आदि की खली का चयन किया जा सकता है।
- हरी खाद के लिए ढैंचा, सनई, फली तुड़ाई के बाद उड़द, मूंग आदि का उपयोग किया जा सकता है।
- राइजोबियम कलचर का उपयोग मुख्यतः दलहनी फसलों में किया जाता है। राइजोबियम कलचर फसलों के अनुसार अलग–अलग होता है।
- नील हरित काई का उपयोग धान की फसल में किया जाता है। नील हरित काई के सूखे पाउडर को रोपाई के 7–10 दिनों के अंदर खेत में समान रूप से पानी की सतह में छिड़क दिया जाता है तथा खेत में 3–4 सेंटीमीटर जलस्तर बनाए रखना जरूरी है। एक हेक्टेयर के लिए 10 किग्रा. पाउडर पर्याप्त होता है।
- रोग नियंत्रण के लिए नीमयुक्त कीटनाशक (बायोपेस्टीसाइड) का प्रयोग करना चहिए।
- बफर ज़ोन– सामान्य खेत से जैविक खेती की दूरी कम से कम तीन मीटर होनी चाहिए। साथ ही पानी के बहाव की दिशा रासायनिक खेती से जैविक खेती के खेत की तरफ नहीं होनी चाहिए। खेती की परिस्थिति के अनुसार बफर ज़ोन की दूरी अधिक निर्धारित की जा सकती है।
- बीज जैविक खेती से तैयार करने चाहिए तथा रसायनों से उपचारित भी न करें।
- बीजोपचार– राइजोबियम, सूक्ष्म जीवाणु या जैविक आधारयुक्त पदार्थों द्वारा किया जाए।
- स्वयं के खेत की जैव सामग्री, जो पौधों या पशुओं से प्राप्त होती है, वही खाद के रूप में उपयोग में लानी चाहिए।

विभिन्न रोगों के नियंत्रण हेतु कुछ उपयोगी व सरल तरीके

नीम की पत्तियां

इसका प्रयोग कवक–जनित रोगों हेतु अत्यंत लाभकारी होता है। 10 लीटर घोल बनाने के लिए एक किलो पत्तियों को रात भर पानी में भिगो दें तथा अगले दिन सुबह पत्तियों को अच्छी तरह कूट कर/पीस कर पानी में मिलाकर छान लें। एक एकड़ जमीन में छिड़काव के लिए 10–12 किलो पत्तियों का प्रयोग करें। शाम को छिड़काव से पहले इस रस में 50 ग्राम रीठे का घोल मिला दें।

नीम की गिरी

इसका प्रयोग फफूंद नाशक के रूप में प्रयोग किया जाता है। नीम की गिरी का 20 लीटर घोल तैयार करने के लिए एक किलो नीम के बीजों के छिलके उतारकर गिरी को अच्छी प्रकार से कूटें तथा एक पतले कपड़े में बांधकर रातभर 20 लीटर पानी में भिगो दें। अगले दिन इस पोटली को मसल–मसलकर निचोड़ दें व इस पानी को छान लें। इस पानी में 50 ग्राम रीठे का घोल मिला दें।

नीम का तेल

15 से 30 मि.ली. नीम के तेल को 1 लीटर पानी में अच्छी तरह घोलकर इसमें रीठे का घोल मिलाएं तथा तुरंत बाद छिड़काव करें वरना तेल अलग होकर सतह पर फैलने लगता है। एक एकड़ की फसल में 1 से 3 ली. तेल की आवश्यकता होती है।

नीम की खली

कवक व मिट्टीजनित रोगों के लिए एक एकड़ खेत में 40 किलो नीम की खली को पानी व गौमूत्र में मिलाकर खेत की जुताई करने से पहले डाले ताकि यह अच्छी तरह मिट्टी में मिल जाए।

करंज (पोंगम)

करंज फलीदार पेड़ है जो मैदानी इलाकों में पाया जाता है। इसकी खल को, खाद व पत्तियों को हरी खाद के रूप में प्रयोग किया जाता है। इसका घोल बनाने के लिए पत्तियां, गिरी, खल व तेल का प्रयोग करते हैं। यह एक उपयोगी फफूंदीनाशक है। इसका उपयोग नीम की तरह किया जा सकता है।

गोमूत्र

गोमूत्र कीटनाशक के साथ–साथ पोटाश व नाइट्रोजन का प्रमुख स्रोत भी है। इसका ज्यादातर प्रयोग फल, सब्जी तथा बेल वाली फसलों को कीड़ों व बीमारियों से बचाने के लिए किया जाता है।

जैविक घोल

परंपरागत जैविक घोल के लिए डैकण व अखरोट की दो–दो किलो सूखी पत्तियां, चिरैता के एक–एक किलो, टेमरू व कड़वी की आधा–आधा किलो पत्तियों को 50 ग्राम देसी साबुन के साथ कूटकर पाउडर बनाएं। जैविक घोल तैयार करें। इसमें जब खूब झाग आने लगे तो घोल प्रयोग के लिए तैयार हो जाता है। बुवाई के समय से पहले व हल से पूर्व इस घोल को छिड़कने से मिट्टी–जनित रोग व कीट नियंत्रण में मदद मिलती है। छिड़काव के तुरंत बाद खेत में हल लगाएं। एक एकड़ खेत के लिए 200 लीटर घोल पर्याप्त है।

पंचगव्य

पंचगव्य बनाने के लिए 100 ग्राम गाय का घी, 1 ली. गौमूत्र, 1 ली. दूध, तथा एक किलोग्राम गोबर व 100 ग्राम शीरा या शहद को मिलाकर मौसम के अनुसार चार दिन से एक सप्ताह तक रखें। इसे बीच–बीच में हिलाते रहें। उसके बाद इसे छानकर 1:10 के अनुपात में पानी के साथ मिलाकर छिड़कें। पंचगव्य से सामान्य कीट व बीमारियों पर नियंत्रण के साथ–साथ फसल को आवश्यक पोषक तत्व भी उपलब्ध होते हैं।

(लेखिका भा.कृ.अ.प.– भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के पादप रोगविज्ञान संभाग में वरिष्ठ वैज्ञानिक (कवक विज्ञान) हैं।)
ई–मेल : deebakamil@gmail.com

उत्तर-पूर्व में जैविक खेती का अवलोकन

–रविकांत अवस्थी, राघवेंद्र सिंह, एस. एम. कण्डवाल

उत्तर–पूर्व भारत में जैविक खेती की पूरी संभावना का दोहन तब तक नहीं किया जा सकता है, जब तक कि समूहों में या समूह के आधार पर जैविक कृषि का अभ्यास नहीं किया जाता। उत्तर–पूर्व भारत में जैविक (प्रमाणित/अप्रमाणित) खाद्यान्न आमतौर पर संगठित बाजारों तक ही सीमित हैं; राजमार्गों पर, सड़क पर या स्थानीय हाटों/मंडियों के माध्यम से कम कीमतों पर उपलब्ध है। हालांकि, अन्य आउटलेट जैसे सुपर मार्केट, होटल, अस्पताल, रेस्तरां और फास्ट–फूड की चेन तेजी से उभर रही है।

भारत वर्ष के उत्तर–पूर्वी क्षेत्र में आठ राज्य शामिल हैं– अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम, नगालैंड, त्रिपुरा और सिक्किम। यह क्षेत्र 22^0 5′ और 29^0 30′ उत्तरी अक्षांश और 87^0 55′ और 97^0 24′ पूर्वी देशांतरों के बीच स्थित हैं। इस क्षेत्र की विविध कृषि जलवायु और भौगोलिक स्थितियां यहां की विशेषता है। इस क्षेत्र में समृद्ध विविधता के साथ विभिन्न पारिस्थितिकी तंत्रों का अनूठा संयोजन है। यह क्षेत्र विविध स्थलाकृतियों और कृषि जलवायु परिस्थितियों से संपन्न है जो कृषि, बागवानी और वानिकी के लिए प्रचुर संभावनाओं की ओर इशारा करता है। उत्तर–पूर्व क्षेत्र का प्रतिनिधित्व छह कृषि जलवायु क्षेत्रों में किया गया है। कुल भौगोलिक क्षेत्र में से, लगभग 54.1 प्रतिशत क्षेत्र वनों के अंतर्गत, 16.6 प्रतिशत फसलों के लिए और शेष भूमि या तो गैर–कृषि उपयोग या बंजर जमीन वाली भूमि (साहा एवं साथी, 2012) के अधीन है। उत्तर–पूर्व के राज्यों की जनसंख्या में विविधता है, और इसमें विभिन्न जनजाति/जाति के लोग शामिल हैं। समुदाय काफी हद तक स्थानीय संसाधनों और प्राकृतिक सेवाओं पर निर्भर हैं। 70 प्रतिशत से अधिक आबादी कृषि या संबद्ध क्षेत्रों में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से जुड़ी हुई है। इस क्षेत्र में लोकप्रिय पैटर्न मुख्य रूप से सीमांत और छोटा है जिसमें 69.66 प्रतिशत कृषक परिवार शामिल हैं। औसत मासिक आय मेघालय में अधिकतम हैं (11792 रुपये) जबकि त्रिपुरा में न्यूनतम (5429 रुपये) है।

उत्तर–पूर्व भारत में जैविक खेती की पूरी संभावना का दोहन तब तक नहीं किया जा सकता है, जब तक कि समूहों में या समूह के आधार पर जैविक कृषि का अभ्यास नहीं किया जाता। उत्तर–पूर्व भारत में जैविक (प्रमाणित/अप्रमाणित) खाद्यान्न आमतौर पर संगठित बाजारों तक ही सीमित हैं। राजमार्गों पर, सड़क पर या स्थानीय हाटों/मंडियों के माध्यम से कम कीमतों पर उपलब्ध है। हालांकि, अन्य आउटलेट जैसे सुपर मार्केट, होटल, अस्पताल, रेस्तरां और फास्ट–फूड की चेन तेजी से उभर रही है। इन संस्थागत खरीदारों को उचित मूल्य पर

उच्च गुणवत्ता वाली जैविक वस्तुओं के आपूर्तिकर्ताओं के लिए अपनी खाद्य सामग्री (मैनू) के लिए जैविक वस्तुओं, विशेष रूप से सब्जियों की विश्वसनीय एवं नियमित आपूर्ति की आवश्यकता होती है। हालांकि, आपूर्ति और सामग्री की विश्वसनीयता अधिकांश छोटे किसानों के लिए प्रमुख समस्या है क्योंकि व्यक्तिगत रूप से संस्थागत खरीदारों की आवश्यकताओं को पूरा करना मुश्किल है।

उत्तर–पूर्व भारत के अधिकांश कृषि उत्पादक छोटे पैमाने के उत्पादक हैं और उत्पादक संगठनों को कृषि उत्पादों को मजबूत करने के लिए सहयोग करना चाहिए। छोटे पैमाने के किसान, और ग्रामीण समुदाय, जिसमें वे रहते हैं, कम मार्जिन के संतुलन के चक्र के अंतर्गत हैं, जिसके परिणामस्वरूप कम जोखिम लेने की क्षमता और कम निवेश होता है, जो कम उत्पादकता, कम बाजार की स्थिति और कम मूल्य की ओर जाता है। विकसित बाजारों में भाग लेने के लिए, छोटे किसानों को हाशिए पर जाने से बचने के लिए नए वातावरण में एकजुट होकर समायोजित करने की आवश्यकता है। एक ऐसा समेकित प्रयास जो उपयोगी सिद्ध हो सकता है, वह है सामान्य चुनौतियों से निपटते हुए और सामान्य अवसरों की तलाश करते हुए, समूह–स्तर पर खेती उत्पादकों, कृषि उद्योगों, व्यापारियों और अन्य निजी और सार्वजनिक बिचौलियों का एक संयुक्त प्रयास जो औपचारिक या अनौपचारिक रूप से, एक ही व्यवसाय और मूल्यतंत्र में लगे हुए हैं। उदाहरण के लिए, विशेष सामग्री के आपूर्तिकर्ता, जैसेकि जैविक खाद, बीज, और अन्य फसल प्रबंधन सामग्री, मशीनरी और सेवाएं, और विशेष बुनियादी ढांचे के प्रदाता शामिल हैं।

पूर्वोत्तर क्षेत्र की मिट्टी

पूर्वोत्तर क्षेत्र की मृदा पहाड़ियों, पर्वत और समतल भूमि पर फैली है जोकि अति–संवेदनशील और भूस्खलन के प्रति संवेदनशील है। हालांकि, उत्तर–पूर्व में मानव–प्रेरित गतिविधियों की भयावहता भारत के अन्य हिस्सों की तुलना में कम है। भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के नागपुर स्थित राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण एवं भूमि नियोजन संस्थान द्वारा उत्तर–पूर्वी राज्यों में भूमि का श्रेणीकरण किया गया है जैसे इनसेपिसोल, एंटिसोल, अल्फिसोल अल्टियसोल और मोलीसोल। इस क्षेत्र में भूमि का क्षरण कुल भौगोलिक क्षेत्र का 36.64 प्रतिशत है जोकि राष्ट्रीय औसत के 20.17 प्रतिशत (अनाम, 2000) से लगभग दोगुना है। मणिपुर, नगालैंड और सिक्किम राज्यों में भूमिक्षरण की समस्या बहुत गंभीर है।

मृदा उपयोग पैटर्न

भारत के उत्तर–पूर्वी क्षेत्र में अनेक भौतिक विविधताएं हैं, जिन्हें छह कृषि जलवायु क्षेत्रों में बांटा गया है। कुल भौगोलिक क्षेत्र 262,179 वर्ग किमी. है। उ.पू. राज्यों में खेती हेतु शुद्ध क्षेत्र का अनुमान 6259 हजार हेक्टेयर है। उत्तर–पूर्वी राज्यों में, असम में अधिकतम कृषि योग्य क्षेत्र (33,57,000 हेक्टेयर) है, जबकि सिक्किम में सबसे कम (77,000 हेक्टेयर) है। भारत के उत्तर–पूर्वी क्षेत्र के भूमि उपयोग के आंकड़े तालिका–1 में दिए गए हैं।

उत्तर–पूर्वी भारत जलवायु परिवर्तन

उत्तर–पूर्वी भारत जलवायु परिवर्तन की दृष्टि से बहुत संवेदनशील है। हाल के वर्षों में, यह क्षेत्र कई जलवायु परिवर्तन प्रेरित आपदाओं के अधीन रहा है जो प्राकृतिक संसाधनों के क्षेत्र और गतिशीलता को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करता है। उत्तर–पूर्वी

तालिका–1 : भारत के उत्तर–पूर्वी क्षेत्र के भूमि उपयोग के आंकड़े

(000 हेक्टेयर)

राज्य	भौगोलिक क्षेत्र	उत्तर–पूर्वी भारत में भूमि उपयोग आंकड़े	वन	कृषि योग्य भूमि की अनुपलब्धता	परती भूमि को छोड़कर अन्य बिना लाइसेंस वाली भूमि	परती भूमि			कुल खेती योग्य क्षेत्र	खाली क्षेत्र	कृषि भूमि/कृषि योग्य भूमि/कृषि भूमि/कृषि योग्य भूमि
अरुणाचल प्रदेश	8374	7239	6732*	64	116	65	36	101	225	296	424
असम	7844	7844	1853	2466	534	85	87	172	2820	4100	3357
मणिपुर	2233	2111	1699*	27	8	0	0	0	377	377	384
मेघालय	2243	2241	946	239	555	155	60	215	286	343	1056
मिजोरम	2108	2093	1585	100	86	161	47	208	114	114	402
नगालैंड	1658	1652	863	95	163	100	50	150	380	499	693
सिक्किम	710	443	336*	10	8	5	7	12	77	147	77
त्रिपुरा	1049	1049	629	145	16	2	2	3	255	383*	273

* भौगोलिक क्षेत्र को छोड़कर अनंतिम डाटा। डाटा स्रोतः कृषि सांख्यिकी 2016 एक नज़र में

तालिका–3 : उत्तर–पूर्व भारत में रासायनिक कीटनाशकों की चक्रवृद्धि वार्षिक वृद्धि दर की खपत

राज्य	2010–11	2011–12	2012–13	2013–14	2014–15	2015–16	2016–17	चक्रवृद्धि वार्षिक वृद्धि दर (प्रतिशत) 2010–2017
अरुणाचल प्रदेश	10	17	18	18	18	17	18	8.76
असम	150	160	183	190	190		360	13 .32
मणिपुर	30	33	31	31	31	30	33	1 .37
मेघालय	10	9	24	44	28			22 .87*
मिजोरम	4	4	4	508	805			188 .9*
नगालैंड		15		16	20	20		7.72 **
सिक्किम								
त्रिपुरा	12	266	272	310	346	293	298	58.23

डाटा स्रोतः पादप संरक्षण निदेशालय, संगरोध और भंडारण, भारत सरकार।

नोटः CAGR '(2010–2015) ****CAGR** (2013–2016)

क्षेत्र अपनी भू–पारिस्थितिक संवेदनशीलता और सामाजिक–आर्थिक परिस्थितियों के कारण जलवायु परिवर्तन से प्रभावित हैं। नॉर्थ ईस्ट के लिए जलवायु पर (चौधरी एवं साथी 2012, रवींद्रनाथ साथी 2011) दीर्घकालिक अध्ययन किया गया है। तापमान की बढ़ती प्रवृत्ति और वर्षा की मात्रा की घटती प्रवृत्ति, निश्चित रूप से जल संतुलन को प्रभावित करेगी और साथ ही इस क्षेत्र के फसल चक्र पैटर्न (लैरेनजम एवं साथी, 2017) को भी। वन आच्छादन के अंतर्गत कम होता क्षेत्र उत्तर–पूर्वी क्षेत्र की एक और पर्यावरणीय समस्या है। मौसमी वर्षा (चक्र/तीव्रता/असमान वितरण) में महत्वपूर्ण परिवर्तन, और उच्च सतह के तापमान में वृद्धि पाई गई है (दास, 2004, अन्य, 2016)।

उत्तर–पूर्व भारत की कृषि पद्धतियां दो प्रकार की हैं अर्थात् पहाड़ी कृषि और मैदानी कृषि। केंद्र और राज्य सरकारों ने क्षेत्रीय सामाजिक अर्थव्यवस्था को प्रोत्साहित करने एवं कृषि विकास को बढ़ावा देने के लिए कई पहल की हैं। चावल और मक्का दोनों पहाड़ी क्षेत्रों और मैदानी क्षेत्रों की प्रमुख फसलें हैं जो वहां की आबादी के भोजन का मुख्य स्रोत हैं। इसके अतिरिक्त, दलहन, तिलहन राज्यों के विभिन्न क्षेत्रों में उगाए जाते हैं। उत्तर–पूर्वी क्षेत्र में विभिन्न बागवानी फसलों अर्थात विविध प्रकार के फल–सब्जियां, मसाले, औषधीय, सुगंधित और सजावटी पौधों में आनुवांशिक विविधताएं हैं।

उत्तर–पूर्वी क्षेत्र के राज्यों में घरेलू आंकड़ों के अनुसार, असम में ग्रामीण परिवारों में कृषि परिवारों की संख्या अधिकतम थी लेकिन ग्रामीण परिवारों में कृषि परिवारों का प्रतिशत मणिपुर (68.2 प्रतिशत) में सबसे अधिक था। मेघालय में प्रति कृषिक औसत मासिक आय अधिकतम थी (11792 रुपये)। (तालिका–2)।

इस क्षेत्र में अधिकांश फसल उत्पादन में रासायनिक उर्वरकों पर न्यूनतम निर्भरता है। अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर, मेघालय, मिजोरम और नगालैंड रासायनिक कीटनाशकों (तालिका–3) के अपेक्षाकृत न्यूनतम उपभोक्ता हैं। भारत के अन्य राज्यों (तालिका–4) की तुलना में उत्तर–पूर्वी राज्यों में कृषि में उपयोग की जाने वाली रासायनिक उर्वरक सामग्री तुलनात्मक रूप से कम है। पर्याप्त मात्रा में पोषक तत्व फसल के अवशेषों के साथ–साथ जैव उर्वरक के उपयोग से प्राप्त किए जा सकते हैं। उत्तर–पूर्वी भारत में मृदा के उर्वरता प्रबंधन में ग्रामीण कचरे का कृषि खाद में मुख्य योगदान

तालिका–2 उत्तर–पूर्व क्षेत्र के राज्यों में ग्रामीण परिवारों, कृषि घरों की अनुमानित संख्या

राज्य	ग्रामीण परिवारों की अनुमानित संख्या (00)	कृषि घरों की अनुमानित संख्या (00)	ग्रामीण परिवारों में कृषि गृह का प्रतिशत	कृषि घरों में औसत मासिक आय (रु)
अरुणाचल प्रदेश	1659	1080	65.1	10869
असम	52494	34230	65.2	6695
मणिपुर	2584	1762	68.2	8842
मेघालय	4721	3544	75.1	11792
मिजोरम	936	758	81.0	9099
नगालैंड	4128	2621	63.5	10048
सिक्किम	1150	674	58.6	6798
त्रिपुरा	6635	2445	36.9	5429

डाटा स्रोतः कृषि घरों (जनवरी–दिसंबर 2013) की स्थिति आकलन सर्वेक्षण, राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण कार्यालय, एनएसएसओः कृषि जनगणना 2010–11

तालिका–4 : पूर्वोतर राज्यों में उर्वरक की खपत

राज्य	उर्वरक की खपत (NPK) (000 टन में)		
	2011–12	2012–13	2013–14
अरुणाचल प्रदेश	0 .7	0 .6	0 .0
टसम	276	276	273
मणिपुर	8	11	11
मेघालय	5	5	5
मिजोरम	1 .0	2 .0	2 .0
नगालैंड	1 .4	2 .0	2 .0
सिक्किम	0 .0	0 .0	0 .0
त्रिपुरा	19	25	23

डाटा स्रोतः देश में कृषि और संबद्ध क्षेत्रों पर रसायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के प्रभाव पर रिपोर्ट (कृषि पर स्थाई समिति (2015–2016)

है। मृदा अम्लता प्रबंधन उत्तर–पूर्व में उपलब्ध चूने के पत्थर के उपयोग के साथ किया जा सकता है। मृदा और जल संरक्षण के उपाय यानी शहतूत, वर्षा जल संचयन, संरक्षण जुताई पद्धतियां आदि टिकाऊ जैविक खाद्य उत्पादन के लिए मृदा स्वास्थ्य का पोषण करने के लिए प्रभावी साबित हुए हैं। क्षेत्र में फसल उत्पादन, संरक्षण, जुताई, आदिकाल से अवशेष प्रबंधन के उपयोग से जुड़ा हुआ है जो पर्यावरण के अनुकूल उत्पादन रणनीति हैं और मिट्टी के स्वास्थ्य में सुधार के लिए भी जाना जाता है।

उत्तर–पूर्वी क्षेत्र में जैविक खेती की स्थिति

उत्तर–पूर्व भारत में जैविक खेती के उत्पादन में काफी क्षमता एवं संभावनाएं हैं। सिक्किम पारंपरिक कृषि प्रधान राज्य भी था, जिसमें फसलें बाहरी आदानों से कम उगाई जाती थी हालांकि आधिकारिक तौर पर राज्य को 2003 से जैविक घोषित किया गया था और दिसंबर 2015 तक पूरी तरह से जैविक स्थिति प्राप्त कर ली थी। जैविक खेती को व्यवस्थित रूप से बढ़ावा देने के लिए, भारत सरकार ने विभिन्न नॉर्थ ईस्ट राज्यों (बेनामी, 2017) में जैविक उत्पादन के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रम (एनपीओपी) और जैविक खेती पर राष्ट्रीय परियोजना (एनपीओएफ) जैसे कार्यक्रमों की शुरुआत की। विभिन्न कृषि जलवायु में जैविक खेती के कई रूपों का सफलतापूर्वक प्रयोग किया गया है, विशेष रूप से वर्षा–आधारित, पहाड़ी और इस क्षेत्र के आदिवासी क्षेत्रों में (मित्रा और देवी, 2016)। इस श्रेणी में जड़ी–बूटियों और औषधीय पौधों जैसे आर्थिक महत्व के कई वन उत्पाद जंगली संग्रह के घटक के रूप में हैं। उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार, जैविक प्रमाणीकरण के तहत कुल क्षेत्रफल 1,18,084 हेक्टेयर है। खेती केवल खाद्य क्षेत्र तक सीमित नहीं है, बल्कि जैविक कपास फाइबर, अन्य फाइबर फसलों, जंगली फसल उत्पादों आदि का उत्पादन किया जाता है।

उत्तर–पूर्वी क्षेत्र में जैविक खेती की संभावनाएं

उत्तर–पूर्वी क्षेत्रों में जैविक खेती के लिए पर्याप्त संभावनाएं है, क्योंकि इस क्षेत्र में अजैविक उर्वरकों और रसायनों का उपयोग अति–न्यूनतम होता है। खेती के तरीके कम इनपुट–कम उपज आधारित हैं और अधिकांश फसलों की औसत पैदावार राष्ट्रीय औसत से बहुत पीछे है। इसके अलावा, इस क्षेत्र में बहुतायत से वर्षा होती है, जो बायोमास उत्पादन को बढ़ावा देती है, जिसका उपयोग टिकाऊ फसल उत्पादन के लिए जैविक पोषक तत्वों के मूल्यवान स्रोतों के रूप में किया जा सकता है। क्षेत्र में कृषि आय बढ़ाने, ग्रामीण गरीबी को कम करने और खाद्य और पोषण सुरक्षा बढ़ाने की भरपूर क्षमता है। जैविक उत्पादन प्रणालियों के अंतर्गत उपज अधिकतम करने के लिए बागवानी फसल के विस्तार की बहुत संभावना है। फल–आधारित मादक पेय, अदरक प्रसंस्करण/निर्जलीकरण, सेब की खेती और प्रसंस्करण, खट्टे फलों का प्रसंस्करण, साबूदाना और स्टार्च के उत्पादन के लिए टैपिओका उत्पादन, शीत भंडारण जैसी उत्पाद प्रक्रिया पर कई बागवानी–आधारित उद्योगों का विकास और बहुउद्देशीय फल और सब्जियों का प्रसंस्करण किया जा रहा है। इस तरह के प्रयास राज्य का स्वरूप बदल सकते हैं और आर्थिक रूप से मजबूती प्राप्त की जा सकती है। इस क्षेत्र में झूम भूमि के अंतर्गत अधिकांश क्षेत्र हैं, जिनका उपयोग जैविक चाय, कॉफी और औषधीय, सुगंधित और डाई पौधों की खेती के लिए किया जा सकता है। इन फसलों में रोजगार और आय सृजन की अपार संभावनाएं हैं जो राज्य के किसानों और श्रमिकों के बीच आर्थिक वरदान हो सकती है।

इसी तरह की विशेषता चावल और अन्य पोषक तत्वों से भरपूर छोटा बाजरा में है जिसका अधिकतम लाभ के लिए

उपयोग कर व्यावसायिक पैमाने पर व्यवस्थित रूप से उत्पादन किया जा सकता है। उत्तर–पूर्वी क्षेत्रों में डेयरी प्रसंस्करण और पोल्ट्री प्रसंस्करण के लिए भी गुंजाइश है। सूखी मछली की भारी मांग है। स्थानीय–स्तर पर छोटे–स्तर की प्रसंस्करण इकाइयां स्थापित करके विभिन्न फलदार सब्जियों, सब्जियों और जंगली फसल का दोहन किया जा सकता है, जिससे ग्रामीण रोजगार बढ़ेगा।

समूह दृष्टिकोण में किसानों की आय बढ़ाने के लिए जैविक खेती

उत्तर–पूर्वी भारत में जैविक खेती की वास्तविक क्षमता गरीब किसानों के कारण नहीं है। उत्तर–पूर्व भारत में अधिकांश उत्पादक छोटे–स्तर के हैं, इसीलिए क्षेत्र के भीतर और बाहर विपणन के प्रस्तावों के लिए पर्याप्त अधिशेष की मात्रा प्रदान करने के लिए जोत का उचित आकार उपलब्ध नहीं है। इन क्षेत्रों में जैविक इनपुट की समय पर उपलब्धता सरकारी एजेंसियों और नीति नियोजकों के लिए भी चिंता का विषय है। इसी तरह, जैविक इनपुट आउटलेट्स और कृषक समुदाय के लिए उनकी विश्वसनीयता का भी क्षेत्र में अभाव है। ऐसी परिस्थितियों में सरकार को इनपुट की समय पर उपलब्धता सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी लेनी पड़ सकती है ताकि संसाधन–आधारित छोटे और सीमांत किसान जैविक खेती को अपना सकें।

इस संदर्भ में क्षेत्र में निम्नलिखित रणनीतियों पर विचार जा सकता है–

विभिन्न एजेंसियों जैसे इनपुट आपूर्तिकर्ता, जैविक उत्पाद, प्रोसेसर और निर्यातक, ब्रांडेड खरीदार और खुदरा विक्रेताओं के बीच उभयपक्षीय संबंध।

उत्पादकों के बीच क्षैतिज संगठन, जो छोटे उत्पादकों को संघों का रूप देते हैं।

उत्पादकों और सहायक संगठनों (जैसे, राज्य सरकारों, सेवा प्रदाताओं, अनुसंधान और शिक्षा संस्थानों, और गैर–सरकारी संगठनों) के बीच पारस्परिक संबंध जो क्षमता विकास और अन्य संसाधनों के माध्यम से श्रृंखला की गुणवत्ता, दक्षता और स्थिरता पहलुओं को सुदृढ़ करते हैं।

एक गांव – एक उत्पादः एक गांव – एक उत्पाद अभियान एक पहल है जो क्षेत्रीय विकास को बढ़ावा देने के लिए जापान में शुरु हुई। इसमें उत्पाद विकास और विपणन सहायता प्रदान करने के साथ गांवों या स्थानीय क्षेत्रों को एक मूल्यवर्धित और स्थानीय उत्पाद पर ध्यान केंद्रित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। फिर उत्पादों को राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय–स्तर पर बेचा जा सकता है। ऐसी ही प्रयोग हमारे यहां भी किया जा सकता है।

निष्कर्ष के रूप में हम कह सकते हैं कि जैविक खेती की वास्तविक क्षमता का उत्तर–पूर्वी क्षेत्र में अभी तक दोहन नहीं किया गया है, जहां अधिकांश किसान छोटे और सीमांत श्रेणी (69.66 प्रतिशत) के अंतर्गत आते हैं। जैविक आदानों की समय पर उपलब्धता सुनिश्चित करने, किसानों के समूहों को सामान्य रूचि और उचित विपणन सुविधाओं के आधार पर तैयार करने, इसी तरह केंद्र और उत्तर–पूर्वी क्षेत्र की राज्य सरकारों की भागीदारी के माध्यम से उचित कार्यान्वयन से किसान केंद्रित योजनाओं के प्रयास निश्चित रूप से क्षेत्र में गरीब किसानों की आय को बढ़ा सकते हैं।

(रविकांत अवस्थी भा.कृ.अ.प. के राष्ट्रीय जैविक खेती अनुसंधान संस्थान, गंगटोक, सिक्किम में संयुक्त निदेशक एवं प्रधान वैज्ञानिक (मृदा) हैं।)

ई–मेल : ravisikkim@yahoo.co.in

जैविक खेती में महिलाओं की भागीदारी

–डॉ. अंशु राहल, यांशी एवं रेनु कुमारी

भारत में महिलाओं ने पारिवारिक दायित्वों का निर्वाह करते हुए भी अपने–अपने कार्यक्षेत्र में विशेष उपलब्धियां हासिल की हैं। पुरुषों के मुकाबले महिलाएं अच्छी प्रबंधक सिद्व हो चुकी हैं चाहे वह किसी भी आयु, धर्म, जाति की हो। महिलाओं की सक्रियता और प्रगति के कारण उनके आत्मविश्वास में भी वृद्धि हुई है। जैविक खेती में सभी जरूरत की वस्तु घर, खेत और पशु से ही प्राप्त हो जाती हैं इसीलिए महिलाएं अपना अधिकतम सहयोग दे पाती हैं। महिलाओं को प्रशिक्षण, आर्थिक सहायता के साथ, अनुसंधान और विपणन सहयोग भी देना चाहिए। पोषण सुरक्षा में भी महिला की अहम भूमिका रहती है।

जैविक खेती करीब 181 देशों में 6.98 करोड़ हेक्टेयर क्षेत्रफल में 27 लाख से अधिक उत्पादकों द्वारा अपनाई जा रही है जिसमें से करीब 8,35,200 उत्पादक भारत से हैं। इस विधि द्वारा मृदा को जीवंत और स्वस्थ रखते हुए केवल जीवाणु तथा जैविक खाद और जैव अवशिष्ट के प्रयोग से प्रकृति के साथ समन्वय रखते हुए टिकाऊ फसल उत्पादन किया जाता है। इस तकनीकी में कृषि, पशुपालन एक–दूसरे के लिए पूरक का कार्य करते हैं। इस विधा से वातावरण स्वस्थ/शुद्ध, उपयुक्त उत्पादन और पौष्टिक प्रदूषण मुक्त खाद्य तो प्राप्त होते ही हैं, साथ ही ग्रामीण विकास की प्रक्रिया शुरू हो जाती है। जैविक खेती द्वारा 20–40 प्रतिशत उपज लागत में कमी, आय में वृद्वि होने के साथ–साथ मिट्टी की गुणवत्ता में बढ़ोत्तरी होती है। भारत के राष्ट्रीय जैविक खेती अनुसंधान संस्थान, गंगटोक, सिक्किम में जैविक खेती से संबंधित शोध कार्य तो होता ही है; साथ ही, प्रशिक्षण भी दिया जाता है। राष्ट्रीय जैविक खेती केंद्र, गाजियाबाद (उत्तर प्रदेश) के अतिरिक्त बंगलुरू, नागपुर, पंचकुला, जबलपुर, भुवनेश्वर और इम्फाल में भी क्षेत्रीय केंद्र बनाए गए हैं तथा वहां पर जैविक खेती परियोजनाएं चलाई जा रही हैं।

कृषि में महिलाओं की भागीदारी

घर संभालने के अतिरिक्त, कृषि में महिलाएं अहम भूमिका निभाती हैं। यदि गौर किया जाए तो आप पाएंगे कि कृषि क्षेत्र में कुल श्रम का 60–80 प्रतिशत हिस्सा महिलाओं द्वारा किया जाता है। पर्वतीय क्षेत्रों में प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष यदि एक पुरुष 1212 घंटे काम करता है तो उसी अवधि में एक महिला 3485 घंटे यानी 3 गुना अधिक। महिलाओं का कृषि में योगदान किसी क्षेत्र विशेष की खेती पर भी निर्भर करता है। विश्व खाद्य एवं कृषि संगठन के अनुसार हमारे भारत में कृषि में महिलाओं का योगदान लगभग 32 प्रतिशत है। पहाड़ी, उत्तर–पूर्वी क्षेत्र और कुछ राज्य जैसे केरल में पुरुषों के मुकाबले महिलाओं का योगदान कृषि तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था में अधिक है। कृषि संबंधित रोजगारों में 48 प्रतिशत महिलाएं हैं। साथ ही 7.5 करोड़ महिलाएं पशुपालन मुख्यतः दुग्ध उत्पादन संबंधित व्यवसाय से जुड़ी हैं।

यदि कृषि में मुनाफा चाहिए तो यह जरूरी है कि कृषि में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाई जाए, चूंकि यह सोचा जाता है कि एक महिला ही गहराई से सोचकर किसी भी बेकार वस्तु को उपयोगी बनाकर उससे आय लेने में समर्थ है। कृषि कार्यों में महिलाओं की लगभग 75 प्रतिशत भागीदारी रहती है। बागवानी में जहां महिला की भागीदारी 79 प्रतिशत देखने को मिलती है वहीं फसल कटाई के उपरांत किए गए कार्यों में 51 प्रतिशत। यदि पशुपालन की बात करें तो चारे के संग्रह, मवेशी प्रबंधन व दुग्ध उत्पादन कार्य में महिलाओं का योगदान 58 प्रतिशत है तथा मछली पालन में 95 प्रतिशत। कृषि क्षेत्र में महिलाओं की भागीदारी सबसे ज्यादा हिमाचल प्रदेश में है जहां जैविक खेती अपनाई जा रही है।

नेशनल सैंपल सर्वे ऑफिस के आंकड़ों के अनुसार भारत के 23 राज्यों में मछली पालन, वानिकी और कृषि में महिलाओं की भागीदारी कुल श्रमशक्ति का लगभग 50 प्रतिशत है। बिहार, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश जैसे राज्यों में 70 प्रतिशत से अधिक महिलाएं कृषि पर निर्भर हैं किंतु तमिलनाडु, पंजाब, केरल और पश्चिम बंगाल में कुल 50 प्रतिशत है। कृषि में महिलाओं की भागीदारी यदि बढ़ाई जाए तो उनकी सामाजिक–आर्थिक परिस्थिति को बदला जा सकता है। ऐसा करने से महिला सशक्तीकरण को भी बढ़ावा मिलेगा।

फसल उत्पादन के कार्यों जैसे पौध लगाना, निराई कर खरपतवार हटाने से लेकर कटाई उपरांत के कार्यों में महिलाओं की अहम भूमिका रहती है। बागवानी की बात करें तो पौध लगाने, कटाई–छटाई, बेसिन बनाने, खाद डालने जैसे कार्यों में महिलाओं का अहम योगदान रहता है। यदि खेतीबाड़ी करने वाली महिलाओं को वैज्ञानिक जानकारी उपलब्ध कराई जाए तो मुनाफे में वृद्वि की जा सकती है।

जहां एक ओर, कृषि वार्षिक आय का साधन है वहीं दूसरी ओर, दुधारू पशु भी महिलाओं के लिए आय का स्रोत हैं। आपालकालीन स्थिति में संकट से उबरने में पशु व्यक्ति का साथ देते हैं। रोजाना महिला 3–6 घंटे अपने पशु मुख्यतः गाय, भैंस के पालन में श्रम करती हैं। चारे की व्यवस्था से लेकर, पशु आवास की साफ–सफाई और दूध संबंधित कार्यों को पूर्ण करने की जिम्मेदारी एक महिला पर ही होती है। यदि पशु उत्पादन और प्रबंधन से संबंधित तकनीकी जानकारी महिलाओं को समय–समय पर दी जाए तो वह कुशल, वृद्विशील पशुपालक बन सकती हैं तथा अधिक मुनाफा कमाकर अपनी आर्थिक स्थिति को सुधार सकती हैं।

मछली उत्पादन में महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने के लिए संसाधन और उत्पादों में महिलाओं की सहभागिता बढ़ाने के साथ ही जरूरी है कि उन्हें इस व्यवसाय को जीविकोपार्जन के साधन के रूप में अपनाने के लिए प्रेरित किया जाए और हर संभव व्यवस्था की जाए।

महिलाएं प्राकृतिक संसाधन जैसे खाद्य पदार्थों को इकट्ठा करने, छोटे पौधों को रोपने, ईंधन हेतु लकड़ियां इकट्ठा करने में मुख्य भूमिका निभाती हैं।

भारत में महिलाओं ने पारिवारिक दायित्वों का निर्वाह करते हुए भी अपने–अपने कार्यक्षेत्र में विशेष उपलब्धियां हासिल की हैं। पुरुषों के मुकाबले महिलाएं अच्छी प्रबंधक सिद्व हो चुकी हैं चाहे वह किसी भी आयु, धर्म, जाति की हो। महिलाओं की सक्रियता और प्रगति के कारण उनके आत्मविश्वास में भी वृद्वि हुई है। जैविक खेती में सभी जरूरत की वस्तु घर, खेत और पशु से ही प्राप्त हो जाती हैं इसीलिए महिलाएं अपना अधिकतम सहयोग दे पाती हैं। महिलाओं को प्रशिक्षण, आर्थिक सहायता के साथ, अनुसंधान और विपणन सहयोग भी देना चाहिए। पोषण सुरक्षा में भी महिलाओं की अहम भूमिका रहती है। समय–समय पर सरकार प्रसार एवं प्रशिक्षण कार्यक्रमों के माध्यम से महिलाओं को प्रोत्साहित करती है। कृषि तकनीक और उपकरणों को महिलाओं के अनुकूल शोध और प्रसार द्वारा विकसित किया जा रहा है। उदाहरण के लिए महिलाएं अपने देशी पशुओं के मूत्र द्वारा अपने फसलों पर लगने वाली बीमारियों और कीटों से सुरक्षा कर रही हैं। अत्यधिक कीटनाशकों के प्रयोग से कृषि उत्पाद भी दूषित होते हैं। बीमारियों को ठीक करने के सारे नुस्खे घर की रसोई में ही उपलब्ध होते हैं जिसे महिला भली–भांति समझती है। महिलाएं अपने पशु के आहार में मुख्यतः घर पर उपलब्ध उत्पाद और उगाए गए चारे से ही पूर्ति करने की कोशिश करती हैं क्योंकि बाजार से आहार खरीदने पर उसके पशु पर होने वाला खर्च बढ़ जाता है। शिक्षा के अभाव के कारण महिला अपने को कमजोर महसूस करती है। एक स्त्री को शिक्षित करने पर पूरा परिवार अपने आप ही शिक्षित हो जाता है।

महिलाओं की सक्रिय भागीदारी राष्ट्र के उत्थान के लिए अपरिहार्य है। यह भी सच है कि महिलाओं के संगठित हुए बिना उनके सामाजिक और आर्थिक सुधार की कल्पना नहीं की जा सकती। हमारे पुरुष–प्रधान देश में आज भी ग्रामीण इलाकों में महिलाओं को अपने अधिकारों से वंचित रखा जाता है। यह जरूरी है कि महिला को सहकारी संगठनों से जोड़े। इसके अलावा, स्वयंसहायता समूहों की भी स्थापना की गई है। सहकारी समितियां उत्पादित उत्पादों के विपणन में सहायक हैं।

सफलता की कहानियां

पति के देहांत के बाद महाराष्ट्र के बागशेपा गांव की मंजुला संदेश पाड़वी ने 4 एकड़ जमीन में जैविक खेती कर बखूबी अपने परिवार को संभाला है। धनपौ, देहरादून (उत्तराखंड) की महिलाओं ने अपने गांव को जैविक गांव का दर्जा दिलाया है। इतना ही नही, यह महिलाएं ईको टूरिज्म को भी बढ़ावा दे रही हैं। भारतीय महिला जैविक उत्सव आयोजित कर महिला किसानों और उत्पादकों को जैविक उत्पाद के साथ–साथ खानपान की सामग्री, मसाले तथा रसोई उत्पाद प्रदर्शित करने का अवसर दिया जाता है। हर साल 15 अक्टूबर को महिला किसान दिवस के रूप में मनाया जाता है। यह सिद्व हो चुका है कि जैविक खाद्य उत्पाद खनिज तथा विटामिन सी जैसे पोषक तत्वों से भरपूर और पौष्टिक होते हैं। महिला नेतृत्व वाले समूह समाज में दूसरों को भी जैविक खेती करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। इससे महिलाओं के सामाजिक और आर्थिक सशक्तीकरण में मदद मिलती है। स्थानीय समुदाय की अर्थव्यवस्था को समर्थन दिया जाता है, साथ ही रोजगार सृजित होते हैं।

झारखंड की बबिता कश्यप ने जैविक खेती, जो 500 हेक्टेयर में फैली है, के माध्यम से 374 किसानों को जोड़ रखा है। आमतौर पर वह किसानों को मेडिसनल (एलोवेरा, सतावर और अश्वगंधा), ऑरगैनिक (मटर, पत्तागोभी और फ्रेंचबीन) तथा स्पाइस (लहसुन, अदरक) की खेती करने के लिए प्रेरित करती हैं। साथ ही, उनकी संस्था (प्रगति एजुकेशन एकेडमी) वर्मी कम्पोस्ट प्रशिक्षण कार्यक्रम द्वारा 200 महिलाओं को जोड़ चुकी है। महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने हेतु बबिता कौशल विकास के लिए प्रशिक्षण जैसे इंडोबरी, सिलाई–कढ़ाई, फाइल मेकिंग आदि भी उपलब्ध कराती हैं।

रायपुर, छत्तीसगढ़ की पुष्पा साहू जैविक खेती अपने घर की छत पर करती है जिसमें फलों के साथ फूल, सब्जी और औषधीय पौधे उगाती हैं। ऐसा करने से घर की जरूरत तो पूरी होती ही हैं। साथ ही, बचत भी हो जाती है। हर्षिल का राजमा, देहरादून का बासमती, पुरोला का लाल चावल, ज्योलीकोट का शहद और सिरसा का किन्नू अब घर–घर प्रयोग किए जा रहे हैं। जैविक खेती के विविध आयाम (फसल, पशुधन आदि) ग्रामीण महिलाओं के आर्थिक सशक्तीकरण में सहायक बन रहे हैं।

(डॉ. अंशु राहल पशु पोषण विभाग, पंतनगर, उत्तराखंड में प्रोफेसर हैं, यांशी एवं रेनु कुमारी रिसर्च स्कॉलर हैं।)

ई–मेल : anshurahal@rediffmail.com

जलियांवाला बाग हत्याकांड की शताब्दी पर शहीदों का स्मरण

जलियांवाला बाग हत्याकांड के शताब्दी वर्ष पर शहीदों की स्मृति में प्रकाशन विभाग ने 15 अप्रैल, 2019 को इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केंद्र (आईजीएनसीए), नई दिल्ली के सहयोग से एक विशेष कार्यक्रम 'याद करो कुर्बानी' का आयोजन किया।

इस अवसर पर उपस्थित गणमान्य व्यक्तियों में प्रख्यात लेखक और आधुनिक भारतीय इतिहास के विशेषज्ञ प्रोफेसर चमन लाल, आईजीएनसीए के सदस्य सचिव डॉ. सच्चिदानंद जोशी, प्रकाशन विभाग की महानिदेशक और अपर महानिदेशक शामिल थे।

इस अवसर पर प्रोफेसर चमन लाल ने हत्याकांड के दौरान हुई क्रूरता और उसके बाद के घटनाक्रम पर प्रकाश डाला। इस घटना के बाद लोग मिलकर संघर्ष करने की ओर बढ़े। डॉ. जोशी ने युवाओं का आह्वान किया कि उन्हें स्वतंत्रता सैनानियों से प्रेरणा लेनी चाहिए और देश की प्रगति के लिए कड़ी मेहनत करनी चाहिए। इस अवसर पर दिल्ली के तीन स्कूलों के छात्रों ने रोचक कार्यक्रम प्रस्तुत किए।

केंद्रीय विद्यालय, प्रगति विहार के छात्रों ने प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित 'याद कर लेना कभी : शहीदों के खत' पुस्तक पर आधारित नाट्क प्रस्तुति की जिसमें भगत सिंह, चंद्रशेखर आज़ाद, सुभाष चंद्र बोस और अन्य स्वतंत्रता सेनानियों के खत पढ़े गए। इस पुस्तक का मलयालम, तमिल, उड़िया और उर्दू में अनुवाद किया गया है। इन अनुवादित पुस्तकों का भी इस अवसर पर विमोचन किया गया।

केंद्रीय विद्यालय, प्रेसिडेंट एस्टेट और जवाहर बाल भवन, मांडी के छात्रों ने प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित एक अन्य पुस्तक 'ज़ब्तशुदा तराने' की कविताएं पढ़ी। इस पुस्तक में शहीदों और स्वतंत्रता सेनानियों की उन कविताओं का संग्रह है जोकि उपनिवेशी सरकार ने ज़ब्त कर ली थीं।

शहीदों की स्मृति कार्यक्रम को आगे बढ़ाते हुए प्रकाशन विभाग और आईजीएनसीए ने 16 अप्रैल, 2019 को भी आईजीएनसीए के सभागार में पुस्तक पढ़ने और विचार–विमर्श के सत्र का आयोजन किया। इस कार्यक्रम में प्रख्यात लेखकों–प्रोफेसर चमन लाल और सुश्री किश्वर देसाई ने अपनी किताबों में से कुछ अंश पढ़े। प्रोफेसर चमन लाल ने 'शहीद भगत सिंह : दस्तावेज़ों के आइने से' पुस्तक के कुछ अंश पढ़े जोकि प्रकाशन विभाग द्वारा ही प्रकाशित की गई है। ❑

Just Released

एस.एस.सी. संयुक्त हायर सेकण्डरी लेवल (10+2) परीक्षा

गत वर्षों के हल प्रश्न-पत्रों सहित

डाक सहायक/छँटाई सहायक | डाटा एण्ट्री ऑपरेटर | लोअर डिवीजन क्लर्क पदों के लिए

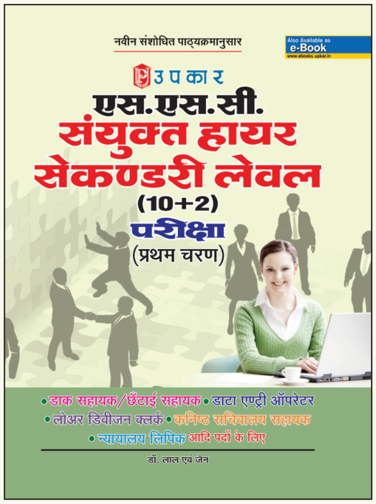

Code 600 ₹ 340.00

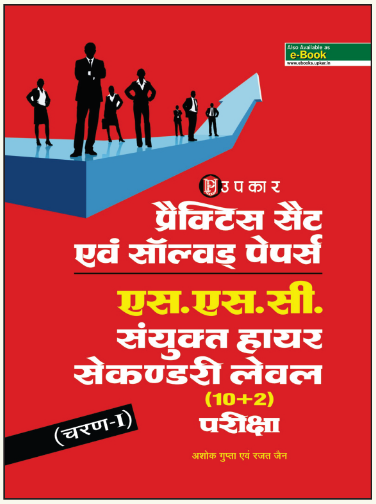

Code 2532 ₹ 215.00

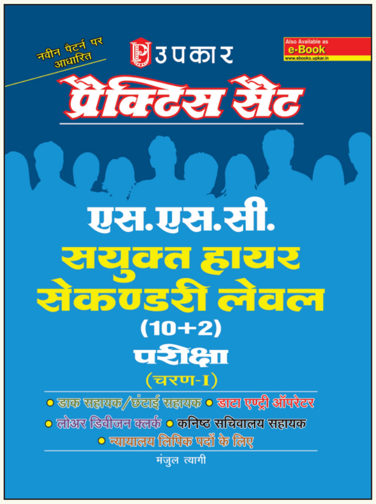

Code 2366 ₹ 240.00

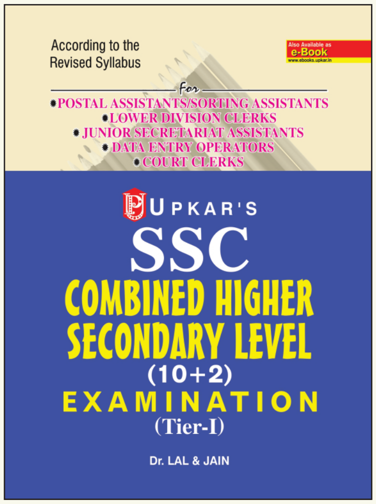

Code 493 ₹ 315.00

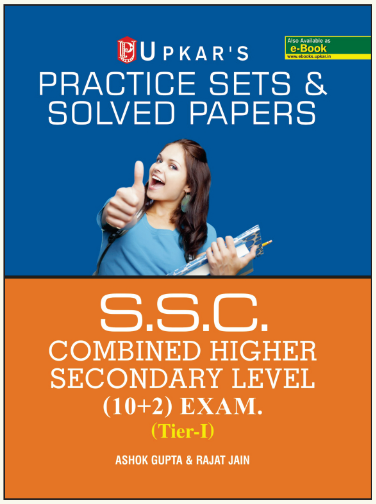

Code 1957 ₹ 215.00

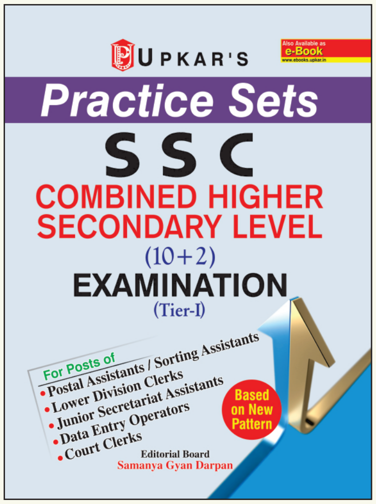

Code 1852 ₹ 205.00

सॉल्वड् पेपर्स — हिन्दी संस्करण Code No. 2621 ₹ 550.00 — अंग्रेजी संस्करण Code No. 1997 ₹ 560.00

उपकार प्रकाशन 2/11 ए, स्वदेशी बीमा नगर, आगरा-282 002 फोन : (0562) 4053333, 2530966; फैक्स : (0562) 4053330

• E-mail : care@upkar.in • Website : www.upkar.in

• नई दिल्ली 23251844, 43259035 • हैदराबाद 24557283 • पटना 2303340 • कोलकाता 25551510 • लखनऊ 4109080 • हल्द्वानी मो. 07060421008 • नागपुर मो. 09370877776 • इन्दौर 9203908088

आर. एन. आई./708/57
डाक-तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. (एस)-05/3164/2018-20
आई.एस.एस.एन. 0971-8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.)-54/2018-20
01 मई, 2019 को प्रकाशित एवं 5-6 मई, 2019 को डाक द्वारा जारी

R.N.I/708/57
P&T Regd. No. DL (S)-05/3164/2018-20
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-54/2018-20
to Post without pre-payment at R.M.S. Delhi.

Think IAS... दृष्टि The Vision Think Drishti

दिल्ली में 20 वर्षों के अनूठे सफर के बाद अब हम आ रहे हैं प्रयागराज ताकि प्रतिभाओं को मिल सकें तराशने वाले हाथ उनके अपने ही शहर और बजट में...

प्रमुख आकर्षण

- ☑ UPSC के साथ ही UPPCS के बदले हुए पैटर्न के मुताबिक सटीक मार्गदर्शन
- ☑ प्रत्येक विषय के लिये विशेषज्ञ एवं सर्वश्रेष्ठ अध्यापकों की टीम
- ☑ विशेषज्ञों द्वारा बनाए गए तथा अपडेटेड नोट्स की सुविधा
- ☑ प्रारंभिक तथा मुख्य परीक्षा के लिये परीक्षा के अनुरूप स्तरीय टेस्ट सीरीज़
- ☑ एक्सपर्ट एग्ज़ामिनर टीम द्वारा विद्यार्थियों के उत्तरों का बारीक मूल्यांकन एवं सुझाव
- ☑ आधुनिक सुविधाओं से युक्त स्मार्ट क्लासरूम एवं बेहतरीन इंफ्रास्ट्रक्चर
- ☑ विद्यार्थियों की शंकाओं के समाधान के लिये अध्यापकों एवं विशेषज्ञों की उपलब्धता
- ☑ गुणवत्तापूर्ण नियमित क्लासरूम टेस्ट्स
- ☑ प्रत्येक माह दृष्टि करेंट अफेयर्स टुडे मैगज़ीन का निःशुल्क वितरण
- ☑ दृष्टि पब्लिकेशन द्वारा प्रकाशित किताबों का निःशुल्क वितरण

हमारी प्रयागराज शाखा का पता

ताशकंद मार्ग, पत्रिका चौराहा, सिविल लाइंस, प्रयागराज

☎ 8929439702, 8750187501 allahabad@groupdrishti.com www.drishtiias.com

प्रकाशक और मुद्रक: डॉ. साधना राउत, महानिदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003.
मुद्रक : जे.के. ऑफसेट, बी-278, ओखला इंडस्ट्रीयल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली-110020, वरिष्ठ संपादक: ललिता खुराना